संस्कृति IAS

सामान्य अध्ययन

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तथा आपदा प्रबंधन

CSE पाठ्यक्रम के अनुरूप

Powered by

Sanskriti IAS

संस्कृति IAS

पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तथा आपदा प्रबंधन

विषय-सूची

इकाई	अध्याय	पृष्ठ संख्या
	खंड-1	
1.	पारिस्थितिक तंत्र की मौलिक संकल्पना	3-10
	खंड-2	
2.	पर्यावरण भूगोल	11-39
	खंड-3	
3.	पर्यावरण विज्ञान	40-74
	खंड-4	
4.	कृषि	75-99
	खंड-5	
5.	प्राकृतिक प्रकोप और आपदा की मौलिक संकल्पना	100-116
	खंड-6	
6.	पर्यावरणीय मुद्दे एवं भू-भौतिकीय घटनाएँ	117-162
6A.	भूकंप	163-171
6B.	सुनामी	172-175

इकाई	अध्याय	पृष्ठ संख्या
6 C.	ज्वालामुखी हलचल	176-181
6 D.	चक्रवात एवं जेट स्ट्रीम	182-191
6 E.	बादल फटना	192-193
6 F.	हीट वेव	194-196
6 G.	वनाग्नि	197-201
	खंड-7	
7.	भारत में आपदा प्रबंधन	202-220
	खंड-8	
8.	जल संकट एवं ऊर्जा	221-230
	खंड-9	
9.	अंतर्राष्ट्रीय संगठन एवं सम्मेलन	231-276

इकाई 1 पारिस्थितिक तंत्र की मौलिक संकल्पना (Basic Concept of Ecosystem)

- भूमिका
- पारिस्थितिक तंत्र के संघटक
  - ➤ अजैविक या भौतिक संघटक
  - ➤ जैविक संघटक
- पारिस्थितिक तंत्र की विशेषताएँ
- पारिस्थितिक तंत्र के प्रकार
- पारिस्थितिक तंत्र की क्रियाशीलता
- पोषण स्तर, आहार शृंखला तथा आहार जाल
- पारिस्थितिकीय पिरामिड
  - ➤ संख्या पिरामिड
  - ➤ जीवभार या बायोमास पिरामिड
  - ➤ ऊर्जा पिरामिड
- पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा प्रवाह
- पारिस्थितिक तंत्र में पोषक तत्त्वों का चक्रीय प्रवाह
- पारिस्थितिक तंत्र की उत्पादकता
  - ➤ पारिस्थितिक तंत्र की उत्पादकता को निर्धारित करने वाले कारक
  - ➤ प्राथमिक उत्पादकता
- अनुक्रम
  - ➤ वनस्पतिविहीन प्रावस्था
  - ➤ प्रवसन की प्रावस्था
  - ➤ सुस्थिति की प्रावस्था
  - ➤ प्रतिक्रिया की प्रावस्था
  - ➤ स्थिरीकरण की प्रावस्था
- पारिस्थितिकीय निकेत

भूमिका (Introduction)

इकोलॉजी (Ecology) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम जर्मन वैज्ञानिक हैकेल (वर्ष 1869) ने किया था। यह शब्द यूनानी भाषा के Oikos तथा Logos से मिलकर बना है, जिसमें Oikos का शाब्दिक अर्थ 'निवास-स्थान' तथा Logos का अर्थ 'अध्ययन' है। इस प्रकार पारिस्थितिकी शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है कि जीवों का उन्हीं के निवास स्थान के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करना पारिस्थितिकी है।

पारिस्थितिक तंत्र (Ecosystem) शब्दावली का प्रयोग सर्वप्रथम टॉन्सले (वर्ष 1935) ने किया। इनके अनुसार, इकोसिस्टम (Ecosystem) अंग्रेज़ी के दो शब्दों से मिलकर बना है जिसमें इको से आशय किसी परिवेश के चारों ओर के प्राकृतिक पर्यावरण अथवा स्थानीय परिस्थिति से है और सिस्टम से आशय एक तंत्र-क्रम या व्यवस्था से है। अत: पारिस्थितिक तंत्र एक अंत:क्रियात्मक, अंत:निर्भर सम्मिश्रित प्राकृतिक व्यवस्था है। पारिस्थितिक तंत्र जैविक और अजैविक पदार्थों की परस्पर प्राकृतिक क्रिया है जिसमें जैव एवं अजैव पदार्थों के साथ-साथ पर्यावरण के संपूर्ण कारक सम्मिलित होते हैं, जो एक अंत:क्रियात्मक संबंधों से जुड़े होते हैं।

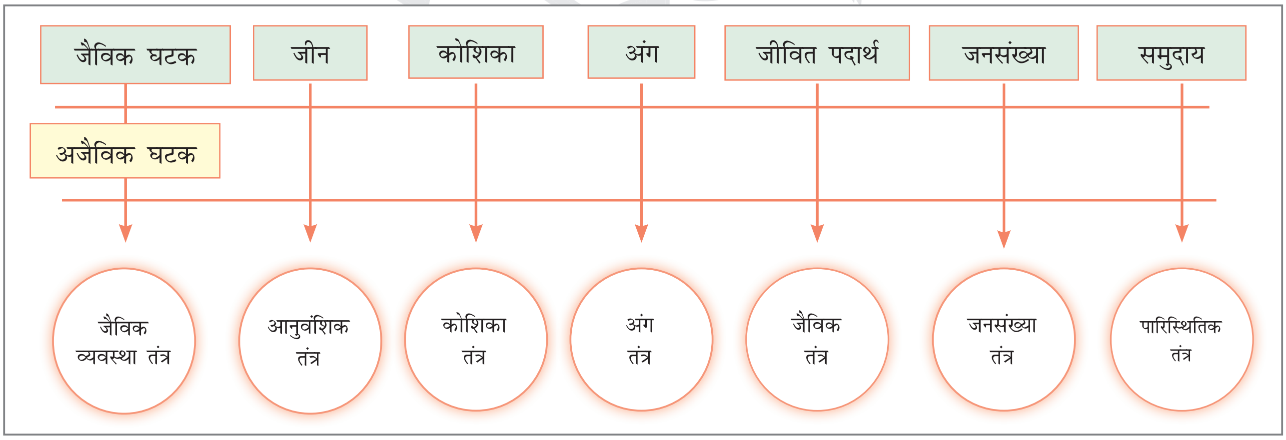

पर्यावरण में जैविक एवं अजैविक घटकों के मध्य अंतर्संबंध विभिन्न स्तरों पर होता है। ओडम (Odam) ने इसे जैविक स्पेक्ट्रम (Biological Spectrum) कहा। उन्होंने इसे परिभाषित करते हुए कहा कि पर्यावरण में छह जैविक तंत्र संभव हैं जिनमें से पारिस्थितिक तंत्र एक है। उनके अनुसार, पारिस्थितिक तंत्र एक प्रकार का जैविक तंत्र है, जो समुदाय और अजैविक घटकों के बीच अंतर्संबंध से विकसित होता है। यहाँ समुदाय से तात्पर्य एक क्षेत्र में रहने वाले समस्त जैविक समूह से है जो वहाँ के पर्यावरण से निरंतर अंत:क्रिया करते रहते हैं।

मूलत: पारिस्थितिक तंत्र एक विशिष्ट क्रियात्मक पर्यावरणीय व्यवस्था है, जिसमें किसी निश्चित स्थान एवं समय वाले पारिस्थितिकीय घटकों तथा उसके क्षेत्र के संदर्भ में सभी जीवधारियों एवं भौतिक पर्यावरण का सकल संतुलन बना रहता है। यह विभिन्न प्रकार की ऊर्जा द्वारा चालित होता है, जिसमें सौर ऊर्जा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

हेड ऑफिस : 636, भू-तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
प्रयागराज केंद्र : महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.
9555-124-124

Copyright @ Sanskriti IAS

- पारिस्थितिक तंत्र में असंतुलन या अव्यवस्था की स्थिति अत्यंत कठोर होती है। इस स्थिति में संबंधित वातावरण विनष्ट होने लगता है तथा आंतरिक संगठन छिन्न-भिन्न हो जाता है।
- पारिस्थितिक तंत्र के विकास के विभिन्न अनुक्रम होते हैं। अनुक्रमों की संक्रमणीय अवस्थाओं को क्रमक (Sere) कहते हैं। अंतिम अनुक्रम की प्राप्ति के बाद पारिस्थितिक तंत्र सर्वाधिक स्थिर दशा प्राप्त कर लेता है।
- पारिस्थितिक तंत्र से प्राकृतिक संसाधन मिलते हैं। यह स्वनिर्मित और स्वनियंत्रित होता है।

पारिस्थितिक तंत्र के प्रकार (Types of Ecosystem)

चूँकि, जैवमंडल एक अत्यधिक जटिल एवं वृहद् तंत्र है इसलिए इनमें होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करना भी उतना ही जटिल है। अतः अध्ययन की सुगमता के लिए पृथ्वी पर क्रियाशील पारिस्थितिक तंत्रों को सूक्ष्म इकाइयों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र मानवीय हस्तक्षेपरहित ऐसा स्वचालित तंत्र होता है जिसमें मूल प्राकृतिक संतुलन बना रहता है एवं मानवीय प्रभाव शून्य रहता है। आवास प्रकारों के आधार पर इसे स्थलीय एवं जलीय पारिस्थितिक तंत्र में वर्गीकृत किया गया है- स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र के अंतर्गत वन, घास तथा मरुस्थल आदि के क्षेत्र आते हैं, जबकि जलीय पारिस्थितिक तंत्र स्वच्छ जलीय एवं सागरीय दो प्रकार के होते हैं।

स्वच्छ जलीय पारिस्थितिक तंत्र भी दो प्रकार के होते हैं- प्रवाही जलीय, जैसे- नदी, नाले, झरने व स्रोत आदि एवं स्थिर जलीय, जैसे- झीलें, तालाब, पोखर, दलदल आदि। सागरीय पारिस्थितिक तंत्र के अंतर्गत विस्तृत एवं गहरे महासागर तथा कम गहरे सागर आदि आते हैं।

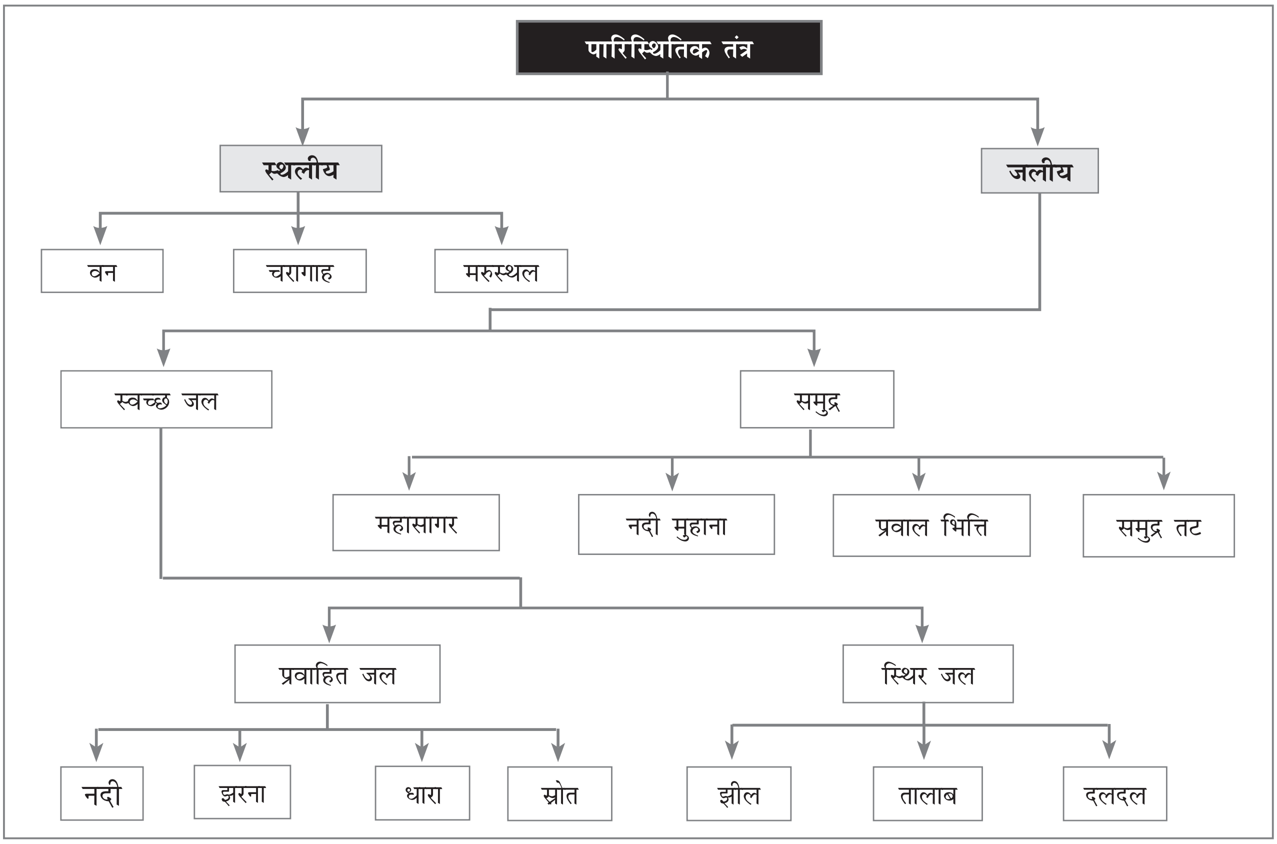

पारिस्थितिक तंत्र की क्रियाशीलता (Ecosystem Functioning)

पारिस्थितिक तंत्र में जैव ऊर्जा का प्रवाह, पोषण चक्र एवं पर्यावरण द्वारा जीवों तथा जीवों के द्वारा पर्यावरण के नियमन जैसी क्रियाएँ संपादित होती हैं। पारिस्थितिक तंत्र की निरंतर क्रियाशीलता ऊर्जा प्रवाह के प्रतिरूप पर निर्भर करती है। जैवमंडलीय पारिस्थितिक तंत्र से लेकर एक सूक्ष्म पारिस्थितिक तंत्र तक सभी एक सतत् भू-जैविक इकाई के रूप में क्रियाशील हैं। किसी भी पारिस्थितिक तंत्र की निरंतर क्रियाशीलता उसके घटकों की पारस्परिक अंतःप्रक्रिया पर निर्भर रहती है जिसे बनाए रखने के लिए इस तंत्र में ऊर्जा प्रवाह एवं पोषक तत्त्वों की चक्रीय अवस्था महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस चक्रीय अवस्था में पोषक तत्त्व एवं आहार ऊर्जा एक संतुलित शृंखला के द्वारा विभिन्न पोषण स्तरों में स्थानांतरित होती हैं। इस प्रक्रिया में अंशमात्र भी परिवर्तन होने पर पारिस्थितिक तंत्र में संकट उत्पन्न हो जाता है।

Copyright @ Sanskriti IAS

पोषण स्तर, आहार शृंखला तथा आहार जाल (Trophic Level, Food Chain and Food Web)

पारिस्थितिक तंत्र में आहार पोषण का पदानुक्रम पाया जाता है जिसे पोषण स्तर कहते हैं। ऊर्जा तथा आहार का संचरण या स्थानांतरण एक पोषण स्तर से अन्य पोषण स्तरों में क्रमबद्ध रूप में संपन्न होता है। इसे आहार शृंखला कहते हैं। आहार शृंखला विभिन्न प्रकार के जीवों का क्रम है जिसके द्वारा एक पारिस्थितिक तंत्र में खाद्य ऊर्जा का प्रवाह होता रहता है।

पारिस्थितिक तंत्र में ऊर्जा का स्थानांतरण एक पोषण स्तर से दूसरे पोषण स्तर में अति जटिल शृंखलाओं के माध्यम से होता है। एक पारिस्थितिक तंत्र की सभी खाद्य शृंखलाएँ परस्पर संबंधित होती हैं और एक खाद्य शृंखला के जीवों का संबंध अन्य खाद्य शृंखलाओं के जीवों से होता है। इस प्रकार की अनेक खाद्य शृंखलाओं के पारस्परिक संबंध को ही आहार जाल कहते हैं।

आहार शृंखला के जिस स्तर या बिंदु पर ऊर्जा या आहार का स्थानांतरण एक जीव से दूसरे जीव में होता है, उसे पोषण स्तर कहा जाता है। एक आहार शृंखला को मुख्य रूप से 4 पोषण स्तरों में विभक्त किया जाता है, जो निम्नलिखित हैं-

1. **प्रथम पोषण स्तर :** यह आहार शृंखला का आधारी (निम्नतम) स्तर होता है जिसमें स्वपोषी पादप सम्मिलित होते हैं जिन्हें प्राथमिक उत्पादक भी कहा जाता है। हरे पौधे इसी स्तर के अंतर्गत आते हैं जो सूर्य के प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण विधि द्वारा अपना आहार स्वयं निर्मित करते हैं।
2. **द्वितीय पोषण स्तर :** सभी शाकाहारी जंतु द्वितीय पोषण स्तर के अंतर्गत सम्मिलित किए जाते हैं जो अपना आहार प्रथम पोषण स्तर के हरे पादपों से प्राप्त करते हैं। इस प्रकार शाकाहारी जंतु प्राथमिक उपभोक्ता माने जाते हैं। बकरी, हिरण, गाय, हाथी, बंदर, ज़िराफ आदि शाकाहारी जंतु इसी वर्ग के अंतर्गत आते हैं।
3. **तृतीय पोषण स्तर :** इसके अंतर्गत मांसाहारी जंतु सम्मिलित होते हैं जो द्वितीय पोषण स्तर के प्राणियों से मांस के रूप में आहार प्राप्त करते हैं। इन्हें द्वितीयक या गौण उपभोक्ता कहा जाता है। शेर, चीता, भेड़िया, तेंदुआ, गिद्ध आदि मांसाहारी जंतु इसके विशिष्ट उदाहरण हैं।
4. **चतुर्थ पोषण स्तर :** मनुष्य इस श्रेणी का उत्कृष्ट उदाहरण है जो प्रथम तीनों पोषण स्तरों से आहार एवं ऊर्जा प्राप्त करता है। मनुष्य शाकाहारी और मांसाहारी दोनों है। अत: इसे सर्वाहारी की श्रेणी में रखा गया है।

- आहार जाल की विविधता में वृद्धि पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता को बढ़ाती है क्योंकि आहार जाल में वृद्धि विदेशज जीवों (Exotic organisms, अन्य क्षेत्रों के जीव) के बाह्य अतिक्रमण के प्रति तंत्र (यहाँ, पारिस्थितिक तंत्र) की लोचकता या सहनशीलता को बढ़ाती है (अर्थात् किसी भी पारिस्थितिक तंत्र के आहार जाल में जितनी ही अधिक विविधता होगी उतनी ही पारिस्थितिक तंत्र की, बाह्य जीवों के अतिक्रमण को बर्दाश्त करने की सामर्थ्य में वृद्धि होगी) तथा किसी निश्चित पारिस्थितिक तंत्र में जीवों की संख्या (Population) के उतार-चढ़ाव (Fluctuation) को कम करती है। आहार जाल की कड़ियों (Links) की संख्या में वृद्धि के साथ पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता बढ़ती है, क्योंकि पारस्परिक क्रियाशील पोषण कड़ियों (Feeding Links) की संख्या में वृद्धि के कारण ऊर्जा प्रवाह के कई वैकल्पिक मार्ग बन जाते हैं, जिस कारण पारिस्थितिक तंत्र में पर्यावरण में परिवर्तनों के प्रति जीव संख्या के समायोजन की विविधता बढ़ जाती है।

आहार जाल की कड़ियों की संख्या में वृद्धि के साथ पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। खाद्य शृंखला के जटिल होकर खाद्य जाल में परिवर्तित होने पर पोषण स्तर की संख्या में वृद्धि होती है जिससे ऊर्जा प्रवाह के कई वैकल्पिक मार्ग बन जाते हैं और जीवों के लिए आहार के कई विकल्प उपलब्ध हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में जीवों के द्वारा न केवल अपने अस्तित्व को बनाए रखना आसान होता है, बल्कि विदेशज जीवों के अतिक्रमण के प्रति सहनशीलता को बढ़ाती है, जिससे पारिस्थितिक क्रियाशीलता में वृद्धि होने के कारण जैव-विविधता का संरक्षण होता है।

पारिस्थितिकीय पिरामिड (Ecological Pyramid)

पारिस्थितिकीय पिरामिड से भी पारिस्थितिक तंत्र के स्वरूप का बोध होता है। यह एक प्रकार का आरेखीय प्रदर्शन है जिसके आधार अक्ष पर मौलिक उत्पादकों की संख्या को और लंबवत् अक्ष पर क्रमिक पोषण स्तर को दिखाया जाता है। आहार शृंखला के आधार पर प्राणियों की संख्या सर्वाधिक और अंत में (शीर्ष पर) न्यूनतम होती है तथा इन दोनों चरम स्थितियों के मध्य प्राणियों की संख्या नीचे से ऊपर की ओर क्रमश: घटती जाती है। इस प्रकार आरेख की आकृति पिरामिड जैसी हो जाती है। पारिस्थितिकीय पिरामिड के तीन रूप होते हैं– (1) संख्या पिरामिड, (2) जीवभार या बायोमास पिरामिड, (3) ऊर्जा पिरामिड।

संख्या पिरामिड (Number Pyramid)

एक वृहद् पारिस्थितिक तंत्र में मौलिक उत्पादकों की संख्या सबसे अधिक होती है। प्रथम श्रेणी के उपभोक्ताओं की संख्या मौलिक उत्पादकों (पादपों) की संख्या से कम होती है और इसी प्रकार द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी के उपभोक्ताओं की संख्या में क्रमश: ह्रास होता जाता है। इस प्रकार एक सीधे पिरामिड की आकृति बन जाती है। इसे संख्या पिरामिड कहते हैं। घास के एक मैदान के पारिस्थितिक तंत्र में संख्या पिरामिड का आधार मौलिक उत्पादक (हरे पादप या घासें) बनाते हैं। हरे पादप संख्या में जंतुओं से अधिक होते हैं और आहार शृंखला के प्रत्येक अगले पोषण स्तर पर उपभोक्ता जंतुओं की संख्या क्रमश: कम होती जाती है।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 2 पर्यावरण भूगोल (Environment Geography)

❖ जलवायु प्रदेश
- भूमिका
- जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण

❖ भारतीय मानसून
- भूमिका
- मानसून की उत्पत्ति एवं क्रियाविधि
- भारत में ॠतु परिवर्तन
- भारत में वार्षिक वर्षा का वितरण प्रतिरूप

❖ विश्व की प्राकृतिक वनस्पति
- भूमिका
- प्राकृतिक वनस्पति

❖ भारत की प्राकृतिक वनस्पति
- भूमिका
- वनस्पति का वितरण तथा प्रकार

❖ मृदा विज्ञान एवं विश्व की मृदाएँ
- मृदाओं की उत्पत्ति
- मिट्टी के निर्माण में मुख्य कारक
- मृदा निर्माणकारी प्रक्रिया
- मृदा संवृद्धि
- मृदा क्षति प्रक्रम
- मृदा परिच्छेदिका
- मृदा का वर्गीकरण एवं वितरण
- मृदा के प्रकार
- वृहद् मृदा वर्गीकरण तंत्र

❖ भारत की मृदाएँ
- भूमिका
- भारत की मिट्टियों के प्रकार

जलवायु प्रदेश (Climate Region)

भूमिका (Introduction)

पृथ्वी के धरातल का अक्षांशीय तथा देशांतरीय विस्तार अत्यधिक होने के कारण इसमें कहीं पर पर्वतमालाएँ तो कहीं पर पठार हैं। इसके अतिरिक्त कहीं दूर तक विशाल मैदान दृष्टिगोचर होते हैं, तो कहीं पर मरुस्थलीय भूमि दिखाई देती है। इनका ध्यानपूर्वक अध्ययन करने पर पता चलता है कि इनकी प्राकृतिक रचना एक-दूसरे से भिन्न है।

जलवायु संबंधी विशेषताओं की समानता के आधार पर पृथ्वी तल को विभिन्न प्रदेशों और भागों में विभाजित किया जाता है। इस प्रकार विभाजित किए गए भू-खंडों को ही 'जलवायु प्रदेश' कहते हैं। विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विश्व जलवायु के वर्गीकरण के मुख्य आधारभूत कारकों एवं प्रभावशाली तथ्यों के आधार पर विश्व की जलवायु को बाँटा गया है।

जलवायु प्रदेश का वर्गीकरण (Classification of Climate Zones)

भूमध्य रेखीय जलवायु (Equatorial Climate)

अवस्थिति एवं विस्तार (Location and Extent)

इसका विस्तार भूमध्य रेखा के दोनों ओर 10° उत्तरी अक्षांश से 10° दक्षिणी अक्षांश के बीच होता है।

इसका मुख्य विस्तार दक्षिणी अमेरिका के अमेज़न बेसिन, अफ्रीका में कांगो-बेसिन नदी की घाटी तथा गिनी तट, दक्षिण-पूर्व एशिया में मलेशिया के अधिकांश भाग, फिलीपींस द्वीपसमूह, मध्य अमेरिका (पनामा के कुछ भाग, कोस्टारिका, निकारागुआ, होंडुरास और ग्वाटेमाला), पश्चिमी द्वीपसमूह के कुछ द्वीप, पश्चिमी कोलंबिया, पूर्वी ब्राज़ील के तटवर्ती निचले मैदान तथा पूर्वी मेडागास्कर में हैं।

जलवायु (Climate)

भूमध्य रेखा के समीप होने के कारण यहाँ सूर्य की किरणें वर्ष भर लंबवत् रूप से पड़ती हैं। इसका तापमान 25°C से 40°C तक आँका गया है। वर्षा अधिकांशत: दोपहर के बाद होती है। इस प्रदेश में सदैव आर्द्र एवं अस्थायी वायु की मोटी परत मौजूद रहती है। इस वायु के थोड़ा ऊपर उठते ही प्रचंड संवहनीय धाराएँ उत्पन्न हो जाती हैं, जिसके फलस्वरूप घने वर्षाकारी मेघ उत्पन्न होकर भारी वर्षा करते हैं। इस प्रदेश में शुष्क ॠतु का अभाव रहता है। वर्षा की अधिकता के कारण यहाँ पर दलदल की स्थिति बनी रहती है। वर्षा प्राय: बादलों की गरज तथा बिजली की चमक के साथ होती है। कभी-कभी एक दिन में कई तड़ितझंझा उत्पन्न हो जाते हैं। ध्यातव्य है कि डोलड्रम की पेटी में 50 से 75 दिन तक तड़ितझंझाओं की उत्पत्ति होती है।

वर्षा (Rain)

इन प्रदेशों में वर्षा वर्ष भर होती है तथा औसत वार्षिक वर्षा 200 सेमी. आँकी गई है। संवाहनिक वर्षा इन प्रदेशों की मुख्य विशेषता है। यह प्रतिदिन दोपहर बाद होती है। कोई भी माह शुष्क नहीं रहता है तथा अप्रैल और नवंबर में सर्वाधिक वर्षा होती है। सिंगापुर, इस जलवायु प्रदेश का प्रतिनिधि नगर है। सामूहिक रूप से विषुवत् रेखीय जलवायु की समरसता असह्य होती है। समुद्र तटीय भागों में समुद्री व स्थलीय पवनों के कारण मौसम सुहावना रहता है।

वायुदाब एवं पवनें (Air Pressure and Winds)

वर्ष भर उच्च तापमानों के कारण ये प्रदेश निम्न वायुदाब पेटी के अंतर्गत रहते हैं, किंतु यहाँ दाब प्रवणता बहुत कम रहती है। यहाँ वायु का क्षैतिज संचार नहीं होता है लेकिन संवहन क्रिया (ऊर्ध्वाधर गति) अवश्य होती है। इन प्रदेशों में डोलड्रम (शांत पवन पेटी) विस्तृत है। साथ ही, उष्णकटिबंधीय व्यापारिक पवनें भी यहाँ प्रवेश करती हैं, चक्रवातीय दशाओं के कारण तड़ितझंझा (Thunder Storm) उत्पन्न होते हैं। इसके तटीय भागों में सागरीय

Copyright @ Sanskriti IAS

- गर्म, शुष्क प्रदेशों में मिट्टी के भीतर पर्याप्त जल नहीं रहता। वर्ष के अधिकांश समय में वाष्पीकरण वर्षा से अधिक होता है और भूमिगत जल का केशिका क्रिया (Capillary Process) द्वारा मृदा के नीचे की परतों से ऊपर की परतों में स्थानांतरण होता रहता है। पानी तो ऊपर पहुँचकर भाप बनकर उड़ जाता है, किंतु उसमें घुले हुए नमक मिट्टी की सतह पर जमा हो जाते हैं। इस प्रकार मिट्टी नमकीन या खारी (Saline) बन जाती है। भारत में ऐसी नमकीन मिट्टी को खारी या रेह मिट्टी कहते हैं और यह उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा पंजाब के कुछ क्षेत्रों में पाई जाती है।
- मिट्टी के निर्माण तथा विकास में वर्षा के बाद ताप का स्थान आता है। यह अपना प्रभाव दो तरह से डालता है। पहला प्रभाव यह है कि तापमान अधिक रहने पर मिट्टी में रासायनिक क्रिया में तीव्रता आ जाती है और तापमान कम रहने पर यह क्रिया धीमी पड़ जाती है। यही कारण है कि आर्द्र तथा गर्म जलवायु में अपक्षरण की दर अधिक होती है और मिट्टी का निर्माण तेज़ी से होता है। दूसरा, तापमान अधिक रहने से जीवाणु यानी बैक्टीरिया तेज़ी से काम करते हैं और कम तापमान में उनकी क्रिया शिथिल पड़ जाती है। गर्म तथा आर्द्र प्रदेशों में कीटाणु के द्वारा धरातल पर गिरी पत्तियों को तेज़ी से खा जाने के कारण ह्यूमस का निर्माण नहीं हो पाता है।

जैविक तत्त्वों का प्रभाव (Effect of Biological Elements)

- पौधे एवं जीव-जंतु मृदा निर्माण को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं। मृदा के लिए प्रभावकारी पौधों की जीवन प्रक्रिया महत्त्वपूर्ण होती है जिनमें विशेष रूप से मृदा से सटे हुए छोटे पौधे एवं जीव सम्मिलित हैं। वानस्पतिक आवरण मृदा अपरदन की दर को प्रभावित करता है तथा मृदा को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करता है।
- वनस्पति वाष्पीकरण की दर को भी प्रभावित करती है। वनस्पति की कमी होने पर मृदा नमी का वाष्पीकरण हो जाता है तथा इसके कारण केशीय जल धरातल की ओर गति करने लगता है।
- वनस्पति आवरण की प्रकृति रासायनिक विनिमय में मुख्य भूमिका निभाती है, जो मृदा निर्माण का मुख्य भाग है। इस प्रकार विलायक पोषक तत्त्व जिनका पौधे उपयोग नहीं कर पाते, अपक्षालन द्वारा मृदा के नीचे वाले भाग में चले जाते हैं।
- बड़े पौधों की जड़ें मृदा से रंध्र बनाकर पानी तथा पोषक तत्त्वों का अवशोषण करके मृदा की संरचना को प्रभावित करती हैं।
- मृदा के जैविक तत्त्वों के रूप में वनस्पति के सभी भाग (पत्तियाँ, छाल, शाखाएँ, फूल और जड़ें) योगदान देते हैं। जैसे प्रेयरी के घास के आवरण किसी रेगिस्तानी प्रदेश की अपेक्षा जैविक तत्त्वों की पूर्ति अधिक करते हैं जिसके कारण यह क्षेत्र संसार के अच्छे उर्वर प्रदेशों में से एक है।
- जब मिट्टी अपरिपक्व (Immature) होती है तो उसमें अधिकांशतः अपक्षयित चट्टानों से प्राप्त खनिज-कण होते हैं। ऐसी दशा में इसे अधकचरी मिट्टी (Skeletal Soil) कहते हैं, क्योंकि इस समय यह मिट्टी का मात्र ढाँचा होता है।

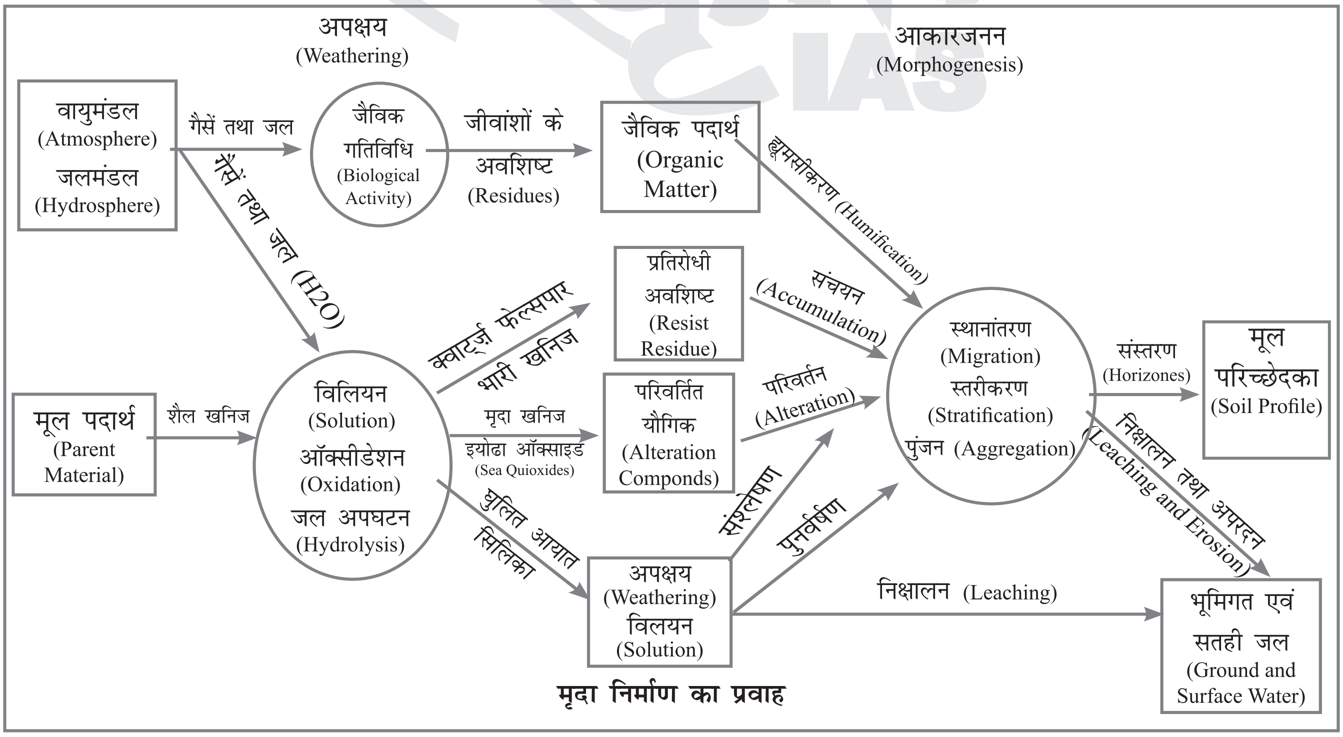

मृदा निर्माण का प्रवाह

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-3

इकाई 3 — पर्यावरण विज्ञान (Environment Science)

- ❖ जैविक समुदाय का वर्गीकरण
- ❖ जीवोम
- ❖ जैव-विविधता
- ❖ वन्यजीव (ॅपसकसपमि)
- ❖ वन्यजीव संरक्षण प्रयास
- ❖ आर्द्रभूमि पारिस्थितिक तंत्र

जैविक समुदाय का वर्गीकरण (Classification of Biotic Community)

जीवाणु (Bacteria)

ये एककोशिकीय जीव होते हैं। ये सभी जगहों पर पाए जाते हैं, जहाँ कार्बनिक पदार्थ उपस्थित होते हैं, जैसे- जल में, मिट्टी में, जीवों के ऊपर तथा अंदर। इनके आकार व आकृति में विभिन्नताएँ पाई जाती हैं।

जीवाणुओं का पारिस्थितिक एवं आर्थिक महत्त्व (Ecological and Economic Importance of Bacteria)

जीवाणुओं की लाभदायक क्रियाएँ

- **नाइट्रीकरण जीवाणु :** कुछ जीवाणु नाइट्रोजन को मृदा से पादपों तक पहुँचाते हैं। उदाहरणस्वरूप एज़ोटोबैक्टर, राइज़ोबियम, नाइट्रोसोमोनास तथा नाइट्रोकोकस अमोनियम आयन को नाइट्राइट्स में परिवर्तित करते हैं।
- **प्राकृतिक अपमार्जक व अपशिष्ट विनाशक :** मृतोपजीवी जीवाणु पादप व जंतु के मृत शरीर एवं अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करते हैं।
- **गोबर गैस प्लांट व खाद :** कुछ जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को खाद में भी परिवर्तित करते हैं, जैसे- मीथेनोजेनिक बैक्टीरिया।
- **अमोनीकरण जीवाणु :** बैसिलस वुल्गेरिस (Bacillus vulgaris) अमीनो अम्ल से अमोनिया को बनाते हैं।

जीवाणुओं की हानिकारक क्रियाएँ

- **मृदा का विनाइट्रीकरण :** थायोबैसिलस डिनाइट्रीफिकेंस (Thiobacillus denitrificance) मृदा में उपस्थित नाइट्रेट्स को नाइट्रोजन गैस में परिवर्तित करता है।
- **मृदा का विसल्फरीकरण :** डिसल्फोविब्रियो डिसल्फ्युरिकेंस (Desulfovibrio desulfuricans) मृदा में पाए जाने वाले सल्फेट्स को हाइड्रोजन सल्फाइड में परिवर्तित करते हैं।

प्रोटिस्टा जगत के वर्ग (Classes of Protista Kingdom)

प्रोटिस्टा जगत को निम्न तीन वर्गों में बाँटा गया है-

प्रोटिस्टा के वर्ग

- **प्रकाश-संश्लेषी प्रोटिस्ट (Photosynthetic Protist) :** इनमें हरितलवक पाया जाता है, जैसे- युग्लीना तथा डाइनोफ्लैज़िलेट्स।
- **अपघटनी प्रोटिस्ट (Decomposer Protist) :** इनमें हरितलवक नहीं पाया जाता है। ये मृत एवं सड़े-गले पदार्थों पर जीवित रहते हैं, जैसे- स्लाइम मॉल्ड्स।
- **प्रोटोज़ोआ प्रोटिस्ट (Protozoa Protist) :** ये प्रथम जंतु हैं, जो सामान्यतः मृदा में पाए जाते हैं, जैसे- पैरामीशियम, अमीबा आदि।

कवक जगत (Fungi Kingdom)

कवक एककोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय हो सकते हैं। कवक विषमपोषी होते हैं।

कवक के प्रकार (Types of Fungi)

- **मृतोपजीवी (Saprophytes) :** अपना भोजन सड़े-गले पदार्थों; जैसे पत्तियों या लकड़ी से प्राप्त करते हैं।
  उदाहरण- राइज़ोपस, पेनिसिलियम आदि।
- **परजीवी (Parasites) :** जो फंजाई सजीव पौधों तथा जंतुओं पर निर्भर करती हैं; उन्हें परजीवी कहते हैं।
  उदाहरण- अस्टिलैंगो आदि।
- **सहजीवी (Symbiotic) :** दूसरे जीवों के साथ सहजीविता संबंध में रहते हैं, जिसमें दोनों जीवों को लाभ पहुँचता है। उदाहरण- कवक तथा शैवाल की सहजीवी संरचना को लाइकेन कहते हैं, जो प्रदूषण संकेतक के रूप में कार्य करते हैं।

हेड ऑफिस : 636, भू-तल, मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
प्रयागराज केंद्र : महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.
9555-124-124

Copyright @ Sanskriti IAS

संघ-निमेटोडा अथवा एस्केल्मिंथस (Phylum-Nematoda or Aschelminthes)

निमेटोडा का शाब्दिक अर्थ सूत्रकृमि होता है, जैसे- एस्कैरिस (गोलकृमि), वाऊचेरिया (फाइलेरिया वर्म) आदि। ये अधिकांशत: जलीय, स्वतंत्रजीवी अथवा परजीवी होते हैं।

संघ-एनीलिडा (Phylum-Annelida)

इस संघ के जंतु स्वच्छ जल में, समुद्री जल में तथा धरती पर पाए जाते हैं। इनके लंबे शरीर में खंड पाए जाते हैं, जैसे- नेरीस, केंचुआ, जोंक इत्यादि। ये मुख्यतया जलीय होते हैं, परंतु कुछ स्थलीय तथा कुछ परजीवी भी होते हैं।

मत्स्य वर्ग (Class-Pisces)

- इस वर्ग में जलीय जंतु आते हैं। उदाहरण के रूप में मेंडेरियन मछली (Synchirpus splendidus), एंग्लर मछली (Coulophyryne jordant), लायन मछली (Pterois volitans), विद्युत रे (Torpedo), स्टिंग रे, डॉग मछली (Scolidon), रोहू (Labeo rohita), समुद्री घोड़ा (Nale hippocampus), एनाबास (Climbing berch), कैट मछली (Mangur) आदि को देखा जा सकता है।
- इनके शरीर के ऊपर कंटकों एवं स्केल का बना बाह्य कंकाल पाया जाता है।
- ये क्लोमों द्वारा श्वसन करते हैं, जो पानी में घुले हुए ऑक्सीजन को ग्रहण करते हैं।
- ये पूर्णत: जलीय होते हैं, जो मीठे एवं खारे दोनों जल में मिलते हैं।
- इनमें वायु की थैली होती है, जो जलीय दाब को नियंत्रित कर जल की गहराई में जाने तथा गहराई से ऊपरी सतह पर आने में मदद करती है।
- ये अनियततापी (Cold-blooded) जंतु होते हैं।

उभयचर वर्ग (Class-Amphibia)

- उभयचर वर्ग के जंतु जल एवं स्थल दोनों पर निवास करते हैं। लार्वा अवस्था में ये पानी में रहते हैं तथा मत्स्य जैसा व्यवहार करते हैं।
- वयस्क अवस्था में ये स्थल पर रहते हैं तथा स्थलीय जंतुओं की भाँति व्यवहार करते हैं, जैसे- सालामेंडर (Salamander), टोड, मेंढक (Rana Tigrina), हाइला (Hyla-tree Frog) तथा इकोथोफिस (Ecothophis) आदि।

सरीसृप वर्ग (Class-Reptilia)

- इस वर्ग के जंतु रेंगने वाले होते हैं। ये स्थल पर रहने वाले जंतु होते हैं, जैसे- कोबरा, ड्रेको (Flying Hizard-Draco), घरेलू छिपकली (Hemidactylus) आदि।
- कुछ जंतु जल में भी रहते हैं परंतु प्रजनन हेतु ये स्थल पर आ जाते हैं।
- ये असमतापी अथवा अनियततापी (cold-blooded) होते हैं।
- इस वर्ग में साँप, छिपकली, मगरमच्छ एवं कछुए आते हैं।

पक्षी वर्ग (Class-Aves)

- इस वर्ग के जंतुओं में अग्रपाद पँखों में रूपांतरित हो जाते हैं, जो उड़ने में सहायता करते हैं, जैसे- कबूतर, कौआ, कीवी (Apteryx), ऑस्ट्रिच (Ostrich), नर टफ्ट बत्तख (Aythya Fuligula), सफेद स्टार्क (Ciconia Ciconia), आदि।
- ये नियततापी (warm-blooded) जीव होते हैं।
- ये शिशु जन्म हेतु अंडे देते हैं।

स्तनधारी वर्ग (Class-Mammalia)

- इस वर्ग के जंतुओं की मादा में स्तन ग्रंथियाँ पाई जाती हैं, जैसे- कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, चमगादड़, चूहा, प्लेटीपस (अण्डे देने वाला स्तनधारी) आदि।
- इनके शरीर पर बाल पाए जाते हैं, जो शरीर के तापमान को नियत रखने में सहायता करते हैं।
- ये एकलिंगी होते हैं, जिनमें आंतरिक निषेचन पाया जाता है। ये शिशु को जन्म देते हैं।
- ये नियततापी (warm-blooded) होते हैं।

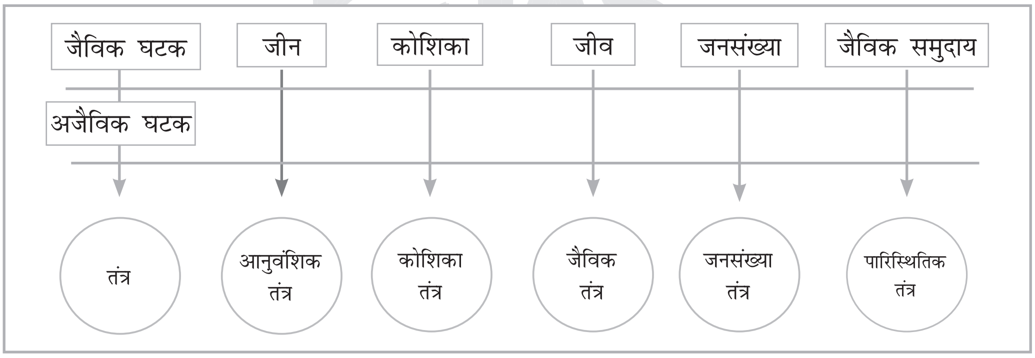

जैविक स्पेक्ट्रम (Biological Spectrum)

जीव (Animal)

कोई भी जीवित प्राणी, जो उपापचयी क्रियाओं के साथ प्रजनन की क्षमता रखते हैं, जीव कहलाते हैं, जैसे- जीवाणु, शैवाल, कुत्ता, मानव, बाघ, हाथी, ह्वेल तथा पक्षी।

प्रजातियाँ (Species)

कोई भी एक प्रजाति समान जीवों का एक समूह होता है।

Copyright @ Sanskriti IAS

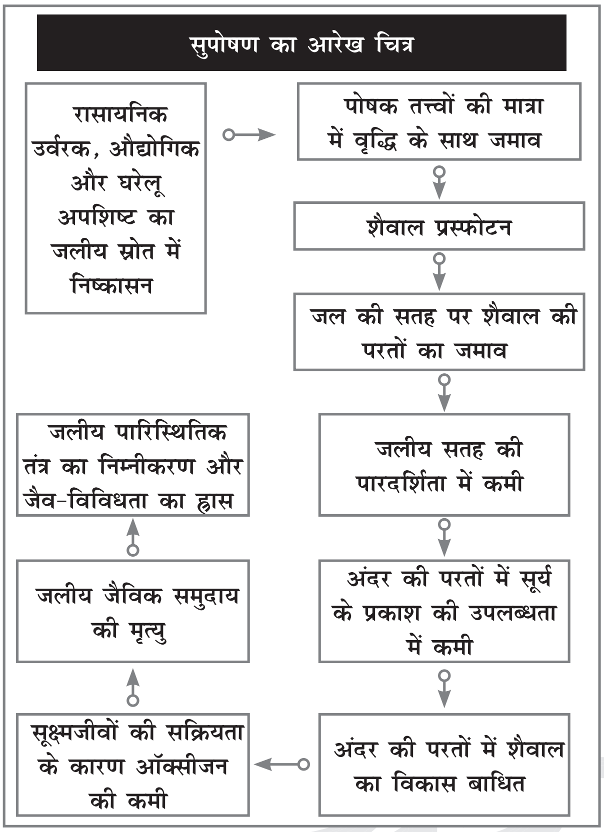

समुद्री बायोम के जैविक समुदाय (Biotic Community of Marine Biome)

महासागर में अत्यंत सूक्ष्म बैक्टीरिया से लेकर विशालकाय ह्वेल तक के जीव मिलते हैं। महासागर की जैव-विविधता भूमि की अपेक्षा अधिक समृद्ध है। समय-समय पर समुद्र में मिलने वाली नई प्रजातियों के बारे में जानकारी भी मिलती रहती है।

जल में रहने वाले जैविक समुदाय को उनके आवास और वातावरण के साथ समायोजन की प्रक्रिया के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है।

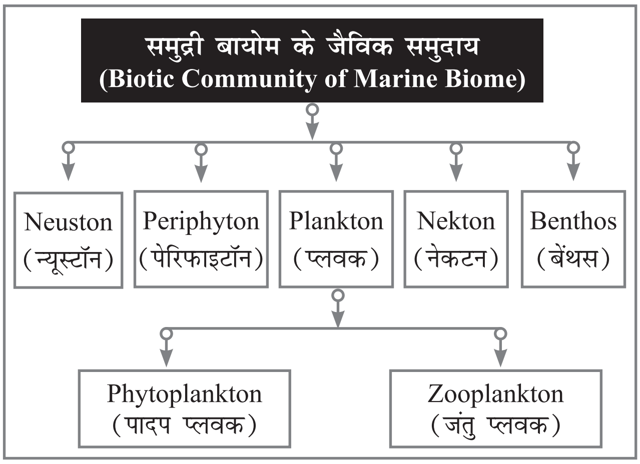

न्यूस्टॉन (Neuston)

ये जल की सतह पर रहने वाले वैसे जीव होते हैं, जिनका सतह से संलग्न वायुमंडल की परतों से भी कार्यात्मक संबंध होता है। इस प्रकार के जीवों के द्वारा पोषक तत्त्वों की प्राप्ति जलीय भाग से होती है। जबकि, श्वसन के लिए ऑक्सीजन का अवशोषण वायुमंडल से होता है और कार्बन डाइऑक्साइड का निष्कासन भी वायुमंडल में होता है।

पेरिफाइटॉन (Periphyton)

ये दलदली भूमि या जलीय भाग में मिलने वाले पौधे के तने, पत्तियों या जड़ों के साथ सहजीवी के रूप में रहने वाले जीव होते हैं।

प्लवक (Plankton)

ये छिछले जलीय भाग में रहने वाले सूक्ष्मजीव होते हैं, जो तरंग और धाराओं की विपरीत दिशा में तैरने की क्षमता नहीं रखते हैं। पादप प्लवक प्रकाश-संश्लेषण के द्वारा सौर ऊर्जा को बायोमास ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। जंतु प्लवक को पादप प्लवक से भोजन की प्राप्ति होती है। वहीं, जंतु प्लवक के अवशिष्ट कार्बनिक पदार्थों से पादप प्लवक को पोषक तत्त्वों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार, पादप और जंतु प्लवक सहजीवी के रूप में एक-दूसरे को लाभ पहुँचाते हैं।

नेकटन (Nekton)

ये जलीय तरंगों और धाराओं की विपरीत दिशा में तैरने की क्षमता रखते हैं। इसलिए इनमें वातावरण के साथ समायोजन की क्षमता भी अधिक होती है। इस प्रकार के जीव भोजन को प्राप्त करने के लिए जल की सतह की ओर आ जाते हैं। ये प्राकृतिक दशाओं के प्रतिकूल होने पर अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अन्य क्षेत्र की ओर पलायन कर जाते हैं। इनके उदाहरण हैं- ह्वेल, अधिकांश मछलियाँ और स्क्विड।

बेंथस (Benthos)

ये जलीय भाग में नितल के समीप रहने वाले जैविक समुदाय होते हैं। सूर्य के प्रकाश की अनुपलब्धता के कारण इन्हें प्रकाश-संश्लेषण के अभाव में विघटित कार्बनिक पदार्थ से पोषक तत्त्वों की प्राप्ति होती है।

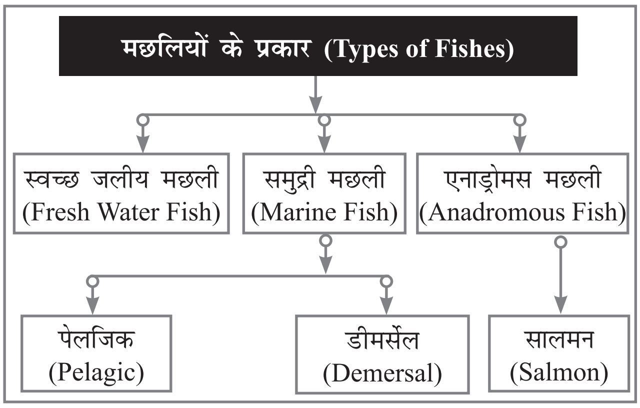

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-4

इकाई 4 कृषि (Agriculture)

- ❖ विश्व के कृषि प्रदेश
  - भूमिका
  - कृषि प्रदेशों के वर्गीकरण के आधारभूत तत्त्व
  - विश्व के कृषि प्रदेशों का वर्गीकरण
  - विभिन्न कृषि प्रदेशों की मुख्य विशेषताएँ
- ❖ प्रमुख फसलों के प्रकार, वितरण एवं विशेषताएँ
  - धान्य फसलें
  - पेय पदार्थ
  - रेशेदार फसलें
  - रबड़
  - गन्ना
  - चुकंदर
- ❖ बीज, खाद, रासायनिक एवं जैव-उर्वरक तथा कीटनाशक और संपोषणीय कृषि
  - उन्नत बीजों की श्रेणियाँ
  - बीज के प्रकार
  - जी.एम. फसल
  - मृदा की उर्वरता एवं उत्पादकता
  - खाद
  - रासायनिक उर्वरक
  - जैव उर्वरक
  - पोषणीय कृषि
  - पारिस्थितिक कृषि
  - रासायनिक कृषि बनाम जैविक कृषि
  - भारत में जैविक कृषि की स्थिति

विश्व के कृषि प्रदेश (Agriculture Regions of the World)

भूमिका (Introduction)

भूमि का एक विस्तृत क्षेत्र जिसमें कृषि करने की दशाओं तथा प्रतिरूप में व्यापक रूप से समानता मिलती है तथा जो समीपवर्ती क्षेत्रों से विशिष्ट रूप से भिन्न होता है, कृषि प्रदेश कहलाता है। कृषि की दशाओं तथा प्रतिरूप का तात्पर्य मुख्यत: फसलों की किस्मों, उनकी उत्पादन-विधि तथा कृषिगत भूमि के उपयोग से है।

कृषि प्रदेशों के वर्गीकरण के आधारभूत तत्त्व (Basic Elements for Classification of Agriculture Regions)

कृषि प्रदेशों का वर्गीकरण करने के लिए वे ही आधारभूत तत्त्व माने जाते हैं जिनसे कृषि की दशाओं व प्रतिरूप की समानता तथा संबद्धता की प्रादेशिक भिन्नता प्रकट होती है। सर्वप्रथम वर्ष 1936 में डी. ह्विटलसी (D. Whittlesey) ने कृषि प्रदेशों का वर्गीकरण किया जिसमें उन्होंने निम्नलिखित आधार तत्त्वों को प्रदेशों के सीमांकन का आधार माना था–

(i) कृषि फसलों एवं पशुओं का पारस्परिक संबंध।
(ii) कृषि उत्पादन विधियाँ।
(iii) कृषि में पूंजी, श्रम एवं संगठन आदि के निवेश की मात्रा।
(iv) कृषि उत्पादन के उपभोग का स्वरूप।
(v) कृषि उत्पादन में प्रयुक्त यंत्र एवं उपकरण तथा आवास संबंधी दशाएँ।

1. कृषि का तात्पर्य फसलों के उत्पादन के साथ-साथ पशुपालन से भी है। भूमि के अनुकूलतम उपयोग के लिए फसलों एवं पशुओं का सहचर्य आवश्यक होता है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में यह सहचर्य अलग-अलग प्रकार का मिलता है जो कृषि की दशाओं की समानता की प्रादेशिक भिन्नताओं को दर्शाता है।
2. भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कृषि उत्पादन विधियों की भिन्नता के फलस्वरूप भी कृषि दशाओं की प्रादेशिक समानता एवं संबद्धता मिलती है। उदाहरणार्थ– किसी क्षेत्र के उत्पादन में पारस्परिक विधियाँ, जैसे– पशुओं तथा हल आदि का प्रयोग प्रयुक्त होती हैं तो किसी क्षेत्र में आधुनिक मशीनों, जैसे– ट्रैक्टर आदि का प्रयोग होता है। किन्हीं क्षेत्रों में फसल उत्पादन सिंचाई पर आधारित है और किन्हीं क्षेत्रों में बिना सिंचाई के कृषि संभव है।
3. किन्हीं क्षेत्रों में कृषि-भूमि पर पूँजी की मात्रा अधिक लगाई जाती है तो कहीं श्रम की अथवा कहीं दोनों का अधिक उपयोग किया जाता है। अत: पूंजी एवं श्रम के विनियोग की मात्राओं की भिन्नता के आधार पर भी कृषि दशाओं की प्रादेशिक समरूपता एवं संबद्धता में पृथकता मिलती है।
4. यदि कृषि-उत्पादन व्यापार के लिए किया जाता है तब वहाँ विस्तृत प्रकार की फसलों के विशेषीकरण वाली कृषि होती है। परंतु, यदि उत्पादन कृषक के निजी उपभोग के लिए किया जाता है तब वहाँ निर्वाहक कृषि की जाती है। अत: कृषि उपज के उपभोग के ढंग से भी कृषि दशाओं में प्रादेशिक अंतर मिलता है।
5. कृषि उत्पादन में प्रयुक्त यंत्र, उपकरण तथा आवास संबंधी दशाओं से विभिन्न क्षेत्रों में कृषि-भूदृश्य का पता चलता है जो कृषि दशाओं की संबद्धता का सर्वोत्तम द्योतक है।

विश्व के कृषि प्रदेशों का वर्गीकरण (Classification of World Agriculture Regions)

ह्विटलसी ने उपरोक्त आधारभूत तत्त्वों के अनुसार विश्व को 13 कृषि प्रदेशों में वर्गीकृत किया है–

Copyright @ Sanskriti IAS

उपज की भौगोलिक दशाएँ (Geographical Conditions of Growth)

जलवायु (Climate)

चुकंदर शीतोष्णकटिबंधीय पौधा है। इसके लिए पर्याप्त नमी की आवश्यकता पड़ती है। इसकी फसल प्राय: 6-7 महीने में पककर तैयार हो जाती है।

तापमान (Temperature)

इसके लिए कम-से-कम तापमान 15ºC होना चाहिए। पाला इसके लिए हानिकारक है। गर्मी के तीन महीनों का तापक्रम 16ºC से 23ºC इसके लिए उपयुक्त रहता है। धूप भी आवश्यक है।

वर्षा (Rain)

इसके लिए औसत वार्षिक वर्षा भी 70 सेमी. से 100 सेमी. तक उपयुक्त रहती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता होती है।

मिट्टी (Soil)

चुकंदर के द्वारा मिट्टी के उपजाऊ तत्त्व का बहुत ह्रास होता है। इसके लिए गहरी एवं उपजाऊ मिट्टी होनी चाहिए।

श्रम (Labour)

चुकंदर की कृषि के लिए मानवीय श्रम की अधिक आवश्यकता पड़ती है। अत: श्रम सस्ता होना चाहिए।

विश्व में चुकंदर का उत्पादन (Production of Sugar Beet in the World)

चुकंदर मुख्यत: पूर्व सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका व यूरोपीय देशों में उगाया जाता है।

बीज, खाद, रासायनिक एवं जैव-उर्वरक तथा कीटनाशक और संपोषणीय कृषि (Seed, Manure, Chemical and Biofertilizer and Pesticides & Sustainable Agriculture)

उन्नत बीजों की श्रेणियाँ (Classes of Improved Seeds)

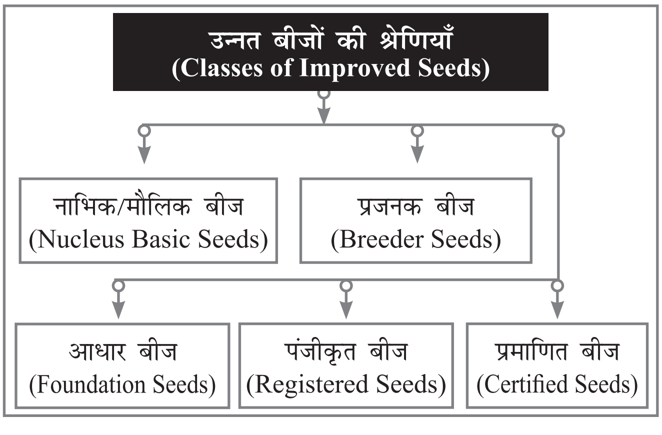

नाभिक/मौलिक बीज (Nucleus/Basic Seeds): यह आनुवंशिक दृष्टि से शत-प्रतिशत शुद्ध होता है। पारंपरिक बीज से प्रजनक बीज की प्राप्ति होती है।

प्रजनक बीज (Breeder Seeds): इसकी सहायता से आधार बीज का उत्पादन किया जाता है।

आधार बीज (Foundation Seeds): इन बीजों की आनुवंशिक शुद्धता को बनाए रखने का प्रयास किया जाता है।

पंजीकृत बीज (Registered Seeds): जब आधार बीज की गुणवत्ता को बनाए रखते हुए आनुवंशिकी संरचना में परिवर्तन कर किसी कंपनी या संस्था के नाम पर पंजीकृत किया जाता है, तब उसे पंजीकृत बीज कहते हैं।

प्रमाणित बीज (Certified Seeds): आधार या पंजीकृत बीज को प्रमाणित बीज का दर्जा देकर व्यावसायिक स्तर पर उपयोग के लिए बाज़ार में उपलब्ध कराया जाता है।

बीज के प्रकार (Types of Seeds)

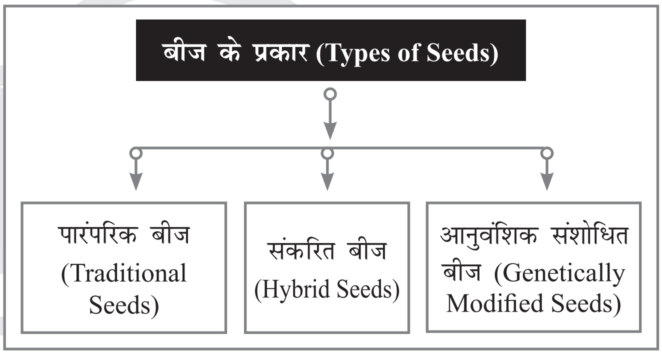

पारंपरिक बीज (Traditional Seeds)

पारंपरिक बीज, प्राकृतिक पर्यावरण के साथ अनुकूलन की क्षमता रखते हैं। इस प्रकार के बीजों के उपयोग पर आधारित कृषि प्रदेश में फसलों का चयन प्राकृतिक दशाओं के अनुरूप किया जाता है। फसल चक्रण के साथ बहुफसल कृषि पद्धति को अपनाना पड़ता है। फसलों की विविधता अधिक होने पर पारंपरिक बीजों का उपयोग जहाँ पारिस्थितिकी दृष्टि से अनुकूल होता है, वहीं फसलों की उत्पादकता कम होने के कारण आर्थिक उपयोगिता सीमित हो जाती है।

संकरित या हाइब्रिड बीज (Hybrid Seeds)

दो पारंपरिक फसलों की प्रजातियों के संकरण से विकसित फसलों की नई प्रजाति से संकरित या हाइब्रिड बीज प्राप्त किए जाते हैं। इस प्रकार के उन्नत किस्म के बीजों की उत्पादकता अधिक होने पर आर्थिक उपयोगिता बढ़ जाती है। किंतु, इनका एकाकी प्रभाव सीमित होने के

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-5

इकाई 5

प्राकृतिक प्रकोप और आपदा की मौलिक संकल्पना
(Basic Concept of Natural Hazards and Disaster)

- भूमिका
- प्राकृतिक प्रकोप और आपदाएँ
  - भेद्यता के प्रकार
  - हम भेद्यता को कैसे कम करते हैं?
  - जोखिम
- प्राकृतिक प्रकोप का वर्गीकरण
  - भू-स्खलन
  - भूकंप
  - सुनामी
  - बाढ़
  - अनावृष्टि/सूखा
  - भारत में सूखा प्रवण क्षेत्र
  - महामारी
  - शहरी बाढ़
  - चक्रवात
  - जैविक आपदा
  - नाभिकीय आपदा
  - धीमी गति से प्रारंभ होने वाली आपदाएँ

भारत में आपदाएँ
- भूमिका
- भारत में प्रमुख आपदाओं का विश्लेषण
  - भूकंप
  - भू-स्खलन
  - चक्रवात
  - बाढ़
  - शहरी बाढ़
  - सुनामी
  - बादल फटना/मूसलाधार बारिश
  - ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड
  - औद्योगिक आपदाएँ
  - अकाल

भूमिका (Introduction)

- भारत अपनी अनूठी भू-जलवायु परिस्थितियों के कारण पारंपरिक रूप से प्राकृतिक आपदाओं के प्रति संवेदनशील रहा है। बाढ़, सूखा, चक्रवात, भूकंप और भू-स्खलन एक आवर्ती घटना रही है। लगभग 60% भू-भाग विभिन्न तीव्रता के भूकंपों से ग्रस्त है; 40 मिलियन हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र बाढ़ की चपेट में है; कुल क्षेत्रफल का लगभग 8% चक्रवात से ग्रस्त है और 68% क्षेत्र सूखे के लिए अतिसंवेदनशील है।
- वैश्विक स्तर पर प्राकृतिक आपदाओं को लेकर काफी चिंता रही है। भले ही पर्याप्त वैज्ञानिक और भौतिक प्रगति हुई हो, लेकिन आपदाओं के कारण जान-माल की हानि कम नहीं हुई है। वास्तव में, मानव क्षति और आर्थिक नुकसान बढ़ गया है।
- इस पृष्ठभूमि में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 1989 में, 1990-2000 को प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण के लिए अंतर्राष्ट्रीय दशक के रूप में घोषित किया जिसका उद्देश्य जान-माल की हानि को कम करना और संयुक्त अंतर्राष्ट्रीय कार्रवाई के माध्यम से सामाजिक-आर्थिक क्षति को सीमित करना था, विशेष रूप से विकासशील राष्ट्रों में।
- अक्तूबर 1999 में ओडिशा में आए सुपर साइक्लोन और जनवरी 2001 में गुजरात में भुज भूकंप ने विविध वैज्ञानिक, इंजीनियरिंग, वित्तीय एवं सामाजिक प्रक्रियाओं को शामिल करते हुए एक बहुआयामी प्रयास को अपनाने की आवश्यकता को रेखांकित किया गया; बहु-विषयक और बहु-क्षेत्रीय दृष्टिकोण अपनाने तथा विकास योजनाओं व रणनीतियों में जोखिम में कमी को शामिल करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया।
- पिछले कुछ वर्षों में, भारत सरकार ने आपदा प्रबंधन के दृष्टिकोण में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव लाया है। नया दृष्टिकोण इस विश्वास पर बल देता है कि विकास तब तक टिकाऊ नहीं हो सकता जब तक कि आपदा न्यूनीकरण को विकास प्रक्रिया में शामिल नहीं किया जाता है।

प्राकृतिक प्रकोप और आपदाएँ (Natural Hazards and Disasters)

- मानवीय गतिविधियों के कारण पर्यावरण की संवेदनशीलता लगातार बढ़ती जा रही है। किंतु, यह एकतरफा रिश्ता नहीं है। मनुष्य भी पर्यावरण के घटक हैं, इसलिए वे पर्यावरण परिवर्तन प्रक्रियाओं के प्रभाव से बच नहीं सकते।
- जब पर्यावरण की स्थानीय, क्षेत्रीय या वैश्विक प्रक्रियाएँ मनुष्यों या उनकी संपत्ति के लिए खतरा पैदा करती हैं तो वे केवल प्राकृतिक घटनाएँ होती हैं। उदाहरण के लिए, अंटार्कटिका में आने वाला बर्फीला तूफान एक प्राकृतिक घटना है। किंतु, यदि यह बर्फीला तूफान हमारे जीवन और संपत्ति के लिए खतरा पैदा करता है तो यह एक आपदा बन जाता है।

प्रकोप (Hazard)

- उन चरम घटनाओं को पर्यावरणीय प्रकोप कहते हैं जो या तो प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न होती हैं या वे मानवजनित होती हैं; ये चरम घटनाएँ हैं, जैसे- भूकंप, ज्वालामुखी, तूफान सूखा, बाढ़ इत्यादि।
- संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार- "प्रकोप प्रभावी रूप से क्षतिकारक भौतिक घटना या मानव क्रिया है जिसके द्वारा मानव जीवन को सामाजिक एवं आर्थिक क्षति होती है या पर्यावरण में अवनयन हो जाता है।"

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-6

इकाई 6

पर्यावरणीय मुद्दे एवं भू-भौतिकीय घटनाएँ (Environmental Issues and Geophysical Phenomena)

❖ वन का महत्त्व, वनोन्मूलन, कारण, संरक्षण एवं प्रबंधन
- भूमिका
- वन का पारिस्थितिकीय महत्त्व
- वनोन्मूलन से उत्पन्न समस्याएँ
- वनोन्मूलन के कारण
- वन संरक्षण
- वन संरक्षण अधिनियम

❖ मृदा अपरदन एवं मृदा संरक्षण
- मृदा अपरदन
- मृदा अपरदन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक
- मृदा अपरदन के प्रकार
- मृदा अपरदन का प्रभाव
- मृदा संरक्षण
- मृदा प्रदूषण

❖ वायु प्रदूषण के प्रभाव
- वैश्विक तापन
- ओज़ोन क्षरण
- अम्ल वर्षा
- जलवायु परिवर्तन

❖ प्रदूषण नियंत्रण
- ओज़ोन परत के संरक्षण के लिये वियना कन्वेंशन - 1985
- मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल
- भारत और मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल
- मरुस्थलीकरण का मुकाबला करने के लिए संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन
- मिनीमाता कन्वेंशन
- गंगा एक्शन प्लान
- गंगा कार्य योजना, चरण-I
- भारत की पहलें
- प्लास्टिक प्रदूषण
- भारत प्लास्टिक समझौता
- प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन (संशोधन) नियम, 2021

❖ बाढ़ एवं सूखा
- नीति आयोग की बाढ़ प्रबंधन रणनीति
- बाढ़ प्रबंधन से संबंधित सरकारी पहल

❖ नगरीय जलवायु
- भूमिका
- नगर की संरचना
- ऊष्मा द्वीप

❖ वाकर-परिसंचरण तथा एल-नीनो दक्षिणी दोलन
- वाकर-परिसंचरण
- दक्षिणी दोलन सूचकांक
- दक्षिणी दोलन सूचकांक की प्रावस्थाएँ
- इंडियन ओशन डायपोल और ई.एन.एस.ओ.
- एल-नीनो मोडोकी
- मैडेन-जूलियन दोलन
- अटलांटिक मेरिडिनल ओवरटर्निंग परिसंचरण
- पैसीफिक दशकीय दोलन

वन का महत्त्व, वनोन्मूलन, कारण, संरक्षण एवं प्रबंधन (Importance of Forest, Forest Degradation, Causes, Conservation and Management)

भूमिका (Introduction)

वन एक ऐसा चरम समुदाय है, जो प्राकृतिक पर्यावरण के साथ समायोजन कर न केवल प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण करता है, बल्कि जैव-विविधता के संरक्षण के साथ बाढ़, सूखा, भूकंप और भू-स्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव को भी कम करता है। इसीलिए ही वन का अपना एक पारिस्थितिकीय महत्त्व है। वन एक प्राकृतिक संसाधन भी है, जिससे जनसमुदाय को जलावन की लकड़ियों के साथ औद्योगिक लकड़ियों एवं औषधियों की प्राप्ति होती है। इसीलिए ही वन का आर्थिक एवं सामाजिक महत्त्व भी है।

वन का पारिस्थितिकीय महत्त्व (Ecological Importance of Forest)

वन स्थलमंडल को स्थायित्व प्रदान कर अंतर्जात बल की तीव्रता को कम करने के साथ भूकंप और भू-स्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव को कम करता है।

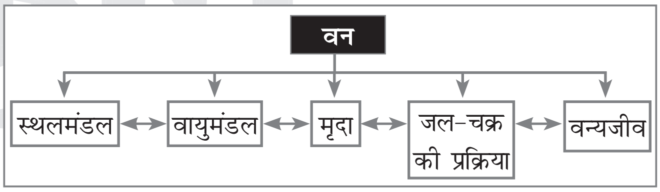

वन को कार्बन सिंक का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत माना जाता है क्योंकि हरी वनस्पति प्रकाश-संश्लेषण के द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण कर ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है, साथ ही ऑक्सीजन का निष्कासन कर वायु को स्वच्छ भी करती है।

वनाच्छादित क्षेत्र में प्राकृतिक वनस्पति की सघनता अधिक होने के कारण सतही जल के बहाव की दर में कमी आती है, जिसके कारण जलीय अपरदन से मृदा का संरक्षण होता है, साथ ही अंत:स्पंदन के दर में होने वाली वृद्धि के कारण मृदा निर्माणकारी प्रक्रम की दर पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक वनस्पति से मृदा को कार्बनिक पदार्थ की प्राप्ति होती है जिससे मृदा में ह्यूमस की मात्रा अधिक होने पर मृदा की उर्वरता में वृद्धि होती है। इस प्रकार हरी वनस्पति मृदा के संरक्षण और विकास के साथ उर्वरता को भी निर्धारित करती है।

हरी वनस्पति वाष्पोत्सर्जन के द्वारा वायुमंडलीय आर्द्रता में वृद्धि कर वर्षा के लिए अनुकूल स्थिति उत्पन्न करती है। सतही जल के बहाव

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 A.	भूकंप (Earthquake)

- भूमिका
- भूकंप विज्ञान
  - भूकंपी तरंग
  - भूकंप उद्गम केंद्र या भूकंप मूल
  - भूकंप लेखी
- भूकंपीय तीव्रता का मापन
  - मरकेली पैमाना
  - रिक्टर पैमाना
- भूकंप का विश्व वितरण
- भूकंप के कारण
  - प्लेट विवर्तनिकी एवं भूकंप
  - अंत:प्लेट संचलन
- ❖ भूकंप: एक आपदा
- भूकंप
  - भूकंप के कारण
  - भूकंप के नुकसान
  - विश्व में भूकंप की घटनाएँ
- भारत में भूकंप
- भूकंपीय आपदा का निवारण
  - केस स्टडी
  - भारत में भूकंप की घटनाएँ
  - भूकंप के संकट का शमन
  - राष्ट्रीय भूकंप जोखिम शमन परियोजना
  - राष्ट्रीय भवन निर्माण संहिता
- भारत में आपदा प्रबंधन की एजेंसियाँ
  - राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण
  - राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण
  - ज़िला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण
  - राज्य कार्यकारी समिति

भूमिका (Introduction)

भू-पटल में होने वाले अंतर्जनित आकस्मिक कंपन या संचलन, जिसकी उत्पत्ति प्राकृतिक रूप से भू-तल के नीचे (भू-गर्भ में) होती है, भूकंप कहलाते हैं। सामान्यत: भूकंप की उत्पत्ति विवर्तनिक क्रिया, ज्वालामुखी क्रिया, समस्थितिक समायोजन के कारण भू-पटल तथा उसकी चट्टानों में संपीडन एवं तनाव के चलते चट्टानों में उथल-पुथल होने के कारण होती है।

ज्वालामुखी क्रिया द्वारा भू-गर्भ से तप्त मैग्मा, जल तथा गैसें आदि ऊपर निकलने के लिए चट्टानों पर तेज़ी से धक्के लगाती हैं तथा दबाव डालती हैं, जिसके कारण भूकंप उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार भू-आकृतिक प्रक्रमों द्वारा भू-पटल की ऊपरी चट्टान परतों में समस्थितिक संतुलन बिगड़ जाने पर क्षणिक असंतुलन उत्पन्न हो जाता है, जिसे दूर करने के लिए समस्थितिक समायोजन होता है। फलस्वरूप, चट्टानी परतों में आकस्मिक हलचल तथा भूकंप उत्पन्न होते हैं।

भूकंप विनाशकारी होते हैं, जिनसे तीव्रता के अनुसार, अधिक जन-धन की क्षति होती है। भूकंप से सागरों में अप्रत्याशित ऊँची लहरें उठती हैं, जिससे तटीय क्षेत्रों में भयंकर बाढ़ें आ जाती हैं, पर्वतीय भागों में भूस्खलन होता है और अनेक स्थानों पर दरारें पड़ जाती हैं। इससे भूमि में उत्थान अथवा निमज्जन भी होता है। तीव्र भूकंप से भवन गिर जाते हैं, उनमें दरारें पड़ जाती हैं तथा अनेक नगर ध्वस्त हो जाते हैं।

भूकंप विज्ञान (Seismology)

भूकंपी तरंग (Seismic Wave)

भूकंप मूल से उत्पन्न **भूकंपीय तरंग** सर्वप्रथम अधिकेंद्र (Epicentre) पर पहुँचकर विभिन्न दिशाओं में प्रसारित होने लगती हैं। साथ ही, अधिकेंद्र से विभिन्न प्रकार की तरंगें अलग हो जाती हैं और पृथक्-पृथक् मार्ग एवं गति से अग्रसर होती हैं। भूकंपी तरंगों के तीन प्रधान वर्ग हैं।

- **प्राथमिक या प्रधान तरंगें (Primary Waves, P-waves):** इनकी गति सर्वाधिक होती है और जो सीधे मार्ग से ठोस तथा तरल भाग से गुज़रती हैं। प्राथमिक तरंगें, ध्वनि तरंग के समान अनुदैर्ध्य तरंग होती हैं, जिनमें कणों का कंपन तरंग की दिशा के समानांतर होता है, इसलिए ही P-तरंगों की तीव्रता सबसे कम होती है।
- **अनुप्रस्थ तरंगें या गौण तरंगें (Transverse Waves or Secondary Waves-S-Waves):** S-तरंग प्राथमिक तरंग के बाद प्रकट होती हैं और अपेक्षाकृत मंद गति से केवल ठोस माध्यम में चलती हैं। प्रकाश तरंग के समान अनुप्रस्थ होने के कारण कणों का कंपन तरंग की दिशा के लंबवत् होता है, इसलिए S-तरंगों की तीव्रता, P-तरंगों की अपेक्षा अधिक होती है।
- **सतही तरंगें (Surface Waves):** ये तरंगें पृथ्वी की सतह पर चलती हैं और पृथ्वी का पूर्ण चक्कर लगाकर अधिकेंद्र तक पहुँचती हैं, जिसके कारण इनका पथ सर्वाधिक लंबा होता है और अधिकेंद्र पर सबसे बाद में पहुँचती हैं। ये तरंगें तरल पदार्थ से भी गुज़र जाती हैं, सतह के समीप चलने के कारण ये सर्वाधिक विनाशकारी होती हैं।
- **रेले तरंग (Rayleigh Wave):** यह एक प्रकार का सतही तरंग है, जो पृथ्वी की सतह के समीप ठोस परतों में कंपन करती हैं। इस प्रकार की तरंग में कणों का कंपन, तरंग की दिशा के अनुदैर्ध्य और अनुप्रस्थ दोनों प्रकार का होता है, इसलिए तरंग का मार्ग दीर्घ-वृत्ताकार (Elliptical) होता है।

भूकंप उद्गम केंद्र या भूकंप मूल (Seismic Focus)

पृथ्वी की सतह के नीचे में स्थित वह केंद्र जहाँ से भूकंप की उत्पत्ति होती है, भूकंप उद्गम केंद्र (Focus) कहलाता हैं। इसे अपकेंद्र भी

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 B.	# सुनामी (Tsunami)

- सुनामी
  - ➤ हिंद महासागर में सुनामी
  - ➤ सुनामी की पूर्व-सूचना और इससे बचाव
  - ➤ भारत में सुनामी से संबंधित सूचना
  - ➤ केस स्टडी : भारतीय महासागर सुनामी (तमिलनाडु), 2004
- सुनामी प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन दिशा-निर्देश
  - ➤ आठ अध्यायों में प्रस्तुत दिशा-निर्देश

सुनामी (Tsunami)

सुनामी जापानी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है तट की ओर आती हुई समुद्री लहरें। ये बहुत लंबी व कम कंपन वाली समुद्री लहरें हैं, जो महासागरीय भूकंपों के प्रभाव से उत्पन्न होती हैं। सुनामी लहरों के साथ जल की गति संपूर्ण गहराई तक होती है, इसलिए ये अधिक प्रलयकारी होती हैं। सुनामी लहरों की दृष्टि से प्रशांत महासागर सबसे खतरनाक क्षेत्र है। महासागरीय प्लेटों के अभिसरण क्षेत्र में ये सर्वाधिक शक्तिशाली होती हैं। इंडोनेशिया के सुमात्रा द्वीप में 26 दिसंबर, 2004 को हिंद महासागर के तल के नीचे उत्पन्न सुनामी लहरें भारतीय प्लेट के बर्मी प्लेट के नीचे क्षेपण का परिणाम थी। भूकंप की तीव्रता रिक्टर पैमाने पर 8.9 दर्ज की गई थी, जिसके कारण प्रलयकारी सुनामी लहरों की उत्पत्ति हुई। साथ ही, इंडोनेशिया, मलेशिया, श्रीलंका व भारत समेत कुल 11 देश इन लहरों की चपेट में आए। भारत में तमिलनाडु का नागपट्टनम ज़िला इससे सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्र था।

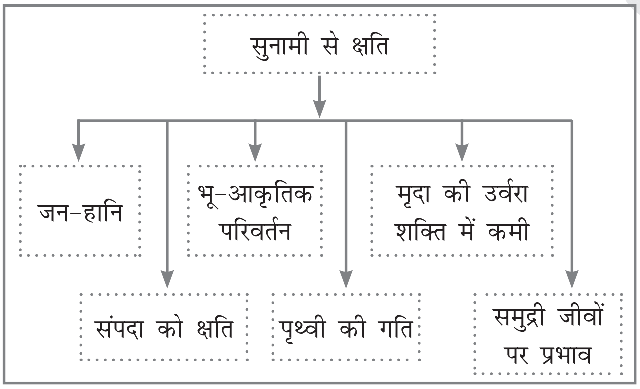

हिंद महासागर में सुनामी
(Tsunami in Indian Ocean)

- प्रशांत महासागर की भाँति हिंद महासागर में भी सुनामी आती रहती है। 26 दिसंबर, 2004 को हिंद महासागर में आई सुनामी सबसे अधिक शक्तिशाली थी जिसने हिंद महासागर के तट पर बसे 11 देशों में जन-धन को अपार क्षति पहुँचाई थी। इसी कारण से इसे 'अंतर्राष्ट्रीय आपदा' की संज्ञा दी गई। यह हिंद महासागर में आए शक्तिशाली भूकंप के कारण उत्पन्न हुई थी।
- सुमात्रा द्वीप (इंडोनेशिया) के तट के निकट एक भयानक भूकंप आया था जिसकी रिक्टर पैमाने पर तीव्रता 8.9 थी। इसका अधिकेंद्र (Epicentre) 3.5° उत्तर तथा 95° पूर्व पर स्थित था। इससे अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह के निकट अध:स्थल में 15 मीटर ऊर्ध्वाधर विस्थापन हुआ तथा बहुत ही शक्तिशाली सुनामी की उत्पत्ति हुई। इस शक्तिशाली भूकंप का कारण प्लेट विवर्तनिक घटना थी। भूगर्भ विशेषज्ञों का विश्वास है कि यह भूकंप बाह्य प्लेट के नीचे भारतीय प्लेट के धँस जाने से आया था।
- सुनामी से जन-धन की अपार क्षति होती है। इसके कारण लाखों लोगों की मृत्यु के साथ ही घरों, सरकारी भवनों तथा परिवहन एवं संचार साधनों की बड़े पैमाने पर क्षति होती हैं।
- भू-आकृतिक परिवर्तन से चेन्नई के तट के निकट तथा अंडमान और निकोबार की भू-आकृति में बहुत बड़ा विकार आ गया। सबसे अधिक प्रभाव अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह पर पड़ा क्योंकि यह क्षेत्र भूकंप के अधिकेंद्रों से केवल 100-150 किमी. की दूरी पर था। भारत का दक्षिणतम बिंदु 'इंदिरा प्वाइंट' लगभग पूर्णतया नष्ट हो गया।
- कभी-कभी भूकंप इतना अधिक शक्तिशाली होता है कि पृथ्वी की दैनिक गति में परिवर्तन कर देता है।
- सुनामी के कारण समुद्री खारा जल तटीय भाग के निचले इलाकों में प्रवेश कर जाता है जिससे मृदा की लवणता में वृद्धि हो जाती है और वह क्षेत्र कृषि कार्य करने योग्य नहीं रह जाता। इन लहरों से मछलियों को काफी नुकसान/क्षति होती है। मछली और झीलों को आश्रय देने वाले मैंग्रोव भी काफी हद तक क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

सुनामी की पूर्व-सूचना और इससे बचाव
(Tsunami Early Warning and Prevention)

सुनामी को रोका नहीं जा सकता, परंतु इसकी पूर्व सूचना देकर जन-धन की अपार क्षति को काफी हद तक कम किया जा सकता है। निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना सुनामी से बचाव की दृष्टि से बेहद उपयोगी साबित हो सकता हैं-

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 c.	ज्वालामुखी हलचल (Volcanic Movement)

ज्वालामुखी हलचल
(Volcanic Movement)

- भूमिका
- ज्वालामुखी क्रियाएँ तथा स्थलाकृतियाँ
  - ➤ ज्वालामुखीयता का कारण
  - ➤ ज्वालामुखी उद्गार से निकले पदार्थ
- ज्वालामुखी का विश्व वितरण
  - ➤ परि-प्रशांत महासागरीय पेटी
  - ➤ हिंद महासागरीय पेटी
  - ➤ मध्य महाद्वीपीय पेटी
- प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत एवं ज्वालामुखीयता
- ज्वालामुखियों का वर्गीकरण
  - ➤ ज्वालामुखी के उद्गार की अवधि के अनुसार वर्गीकरण
  - ➤ ज्वालामुखियों के उद्गार के स्वरुप के अनुसार वर्गीकरण
  - ➤ केंद्रीय उद्गार के आधार पर ज्वालामुखियों का वर्गीकरण
- ज्वालामुखीयता एवं भूकंप
- ज्वालामुखी से निर्मित स्थलाकृतियाँ
  - ➤ बाह्य स्थलाकृतियाँ
  - ➤ अंतर्वेधन से बनी स्थलाकृतियाँ
- ज्वालामुखी: एक प्राकृतिक आपदा
  - ➤ ज्वालामुखी के प्रभाव

भूमिका (Introduction)

ज्वालामुखी, पृथ्वी की पर्पटी में एक वेंट या विदर (दरार) है जिसके माध्यम से लावा, राख, चट्टानें और गैसें निकलती हैं।

ज्वालामुखी क्रियाएँ तथा स्थलाकृतियाँ (Volcanic Activities and Landforms)

पृथ्वी की आभ्यंतरिक अस्थिरता के कारण पृथ्वी की सतह पर अनेक घटनाएँ घटित होती हैं। ये घटनाएँ सृजनात्मक और विनाशात्मक दोनों होती हैं। ज्वालामुखी क्रिया एक अल्प अवधि वाली विनाशात्मक घटना है, साथ-ही-साथ इसका सृजनात्मक स्वरूप भी महत्त्वपूर्ण है। ज्वालामुखी क्रिया (Vulcanicity), ज्वालामुखी के प्रकट होने की क्रिया (Mechanism of Volcano) तथा ज्वालामुखी (Volcano) आदि को प्राय: समान अर्थ में प्रयोग किया जाता है। किंतु, इन सभी में अंतर होता है जैसे- ज्वालामुखीयता एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें भू-गर्भ में मैग्मा की उत्पत्ति तथा उसका भू-गर्भ की विभिन्न परतों से होते हुए पृथ्वी की सतह पर प्रकट होना सम्मिलित है। जब ज्वालामुखीयता की क्रिया तीव्र रहती है तब गर्म लावा तथा अन्य पदार्थ पृथ्वी के आभ्यंतर से सतह पर प्रकट होते हैं। इसके विपरीत जब क्रिया मंद होती है तो सतह के नीचे ही जमकर आभ्यंतरिक स्थलाकृतियों का विकास करते हैं। इस प्रकार ज्वालामुखीयता के अंतर्गत होने वाली आंतरिक क्रिया के द्वारा आभ्यंतरिक स्थलाकृतियों का एवं बाह्य क्रिया द्वारा बाह्य ज्वालामुखी स्थलाकृतियों का विकास होता है।

ज्वालामुखीयता का कारण (Cause of Volcanism)

तापमान का बढ़ना (Increase in Temperature)

भू-पटल के नीचे प्रति 32 मीटर पर 1ºC की दर से तापमान में वृद्धि होती है। भौतिक शास्त्र के कुछ विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि पृथ्वी के अंदर कुछ पदार्थ ऐसे हैं, जो स्वयं ताप उत्पन्न करते हैं। फलस्वरूप, पृथ्वी के आंतरिक भाग का तापमान बहुत अधिक हो जाता है, जिससे इसका मध्यवर्ती भाग द्रवितमंडल के रूप में होगा।

दाब में कमी (Decrease in Pressure)

कुछ विद्वानों ने यह भी अनुमान लगाया कि पृथ्वी की सतह से केंद्र की ओर जाने पर दाब में निरंतर वृद्धि होती है, जिससे अधिक तापमान होने पर भी अधिक दाब के कारण पदार्थ ठोस अवस्था में पाए जाते हैं, क्योंकि दाब का गलनांक से समानुपातिक संबंध होता है। जब तक ऊपर से दबाव रहेगा, तब तक पृथ्वी के अंदर में बेसाल्ट की परत ठोस अवस्था में रहती है, परंतु जब दबाव में कमी आती है तो गलनांक भी घट जाता है, जिसके के कारण यह परत तरल अथवा पिघल जाती है। दबाव कम होने के विषय में दो संभावनाएँ व्यक्त की जाती हैं, जो निम्नलिखित हैं–

1. दरार अथवा भ्रंश के विकास के कारण, तथा
2. मोड़दार पर्वतों (Folded Mountains) के विकास के कारण कहीं पर भार अधिक तो कहीं पर कम हो जाता है। इससे कहीं पर दबाव में वृद्धि हो जाती है तो कहीं पर दबाव में कमी आ जाती है। दबाव में कमी आने पर पृथ्वी के अभ्यंतर में ठोस पदार्थ पिघल कर मैग्मा का रूप धारण कर लेता है।

जल की मात्रा में वृद्धि (Increase in the Amount of Water)

यदि उपरोक्त स्थिति होने पर किसी भी प्रक्रिया से जल रिसकर नीचे चला जाता है तो मैग्मा के संपर्क में आने पर गैस का रूप धारण कर लेता है। यदि गर्म गलित पदार्थ में गैस की मात्रा ज्यादा रहती है तो उसके सतह पर आने की संभावना अधिक प्रबल होने लगती है। इसके अतिरिक्त, जहाँ पर चट्टानें कमज़ोर होती हैं अथवा जिस स्थान पर भ्रंश या दरार का निर्माण हुआ रहता है, उनको तोड़कर तीव्र गति से बाहर आ जाती हैं। इसके फलस्वरूप ज्वालामुखी का उद्गार होता है। इस प्रकार

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 D.	# चक्रवात एवं जेट स्ट्रीम (Cyclone Jet Stream)

- भूमिका
- उष्णकटिबंधीय चक्रवात
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की उत्पत्ति के लिए आवश्यक दशाएँ
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की संरचना, विकास और विघटन
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के मार्ग
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवात की ऊर्ध्वाधर संरचना
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवात में मौसम
- शीतोष्ण चक्रवात
  - भूमिका
  - शीतोष्ण चक्रवात का जीवनचक्र
  - शीतोष्ण चक्रवात में वर्षा तथा मौसम पर प्रभाव

❖ जेट स्ट्रीम
- भूमिका
  - जेट स्ट्रीम का विकास चक्र
  - जेट स्ट्रीम के प्रकार
  - जेट स्ट्रीम का मौसम पर प्रभाव
- चक्रवात एक आपदा के रुप में
  - भारत में उष्णकटिबंधीय चक्रवात प्रभावित क्षेत्र
  - भारत के कुछ महत्त्वपूर्ण चक्रवाती तूफान
  - उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के विध्वंसकारी प्रभाव
- चक्रवात आपदा प्रबंधन
  - चक्रवात आपदा पूर्व तैयारी
  - चक्रवात आपदा का निवारण तथा शमन
  - चक्रवात आपदोपरांत प्रबंधन
  - चक्रवात की भारत में स्थिति
- केस स्टडी : ओडिशा सुपर चक्रवात, 1999
  - ओडिशा राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (ओ.एस.डी.एम.ए.)

भूमिका (Introduction)

- चक्रवात निम्न वायुदाब के केन्द्र होते हैं। इनमें केन्द्र से बाहर की ओर वायु दाब-बढ़ता जाता है। नतीजतन परिधि से केन्द्र की ओर पवन चलने लगती है। चक्रवात में पवनों की दिशा उत्तरी गोलार्द्ध में घड़ी की सूईयों के विपरीत तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में उनके अनुरूप होती है।
- स्थिति और भौतिक गुणों की दृष्टि से चक्रवात दो प्रकार के होते हैं। शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात और उष्ण कटिबंधीय चक्रवात।

उष्णकटिबंधीय चक्रवात (Tropical Cyclone)

कर्क तथा मकर रेखाओं के मध्य वृत्ताकार समदाब रेखाओं से घिरा हुआ निम्न वायुदाब का केंद्र, जिसकी उत्पत्ति महासागरीय सतह पर होती है, उष्णकटिबंधीय चक्रवात कहलाते हैं। इनकी गति, आकार एवं मौसम में पर्याप्त अंतर पाया जाता है। इन चक्रवातों की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- उष्णकटिबंधीय चक्रवात की समदाब रेखाएँ वृत्ताकार होती हैं, जिनके निम्न वायुदाब के केंद्र से बाहर की ओर जाने पर वायुदाब में वृद्धि होती है। समदाब रेखाओं की संख्या कम एवं सघन होने के कारण वायुदाब में अधिक अंतर हो जाता है, जिससे बाहर से हवाएँ तेज़ी से केंद्र की ओर अभिसरित होती हैं और तूफानी गति धारण कर लेती हैं।
- चक्रवातीय हवाएँ विभिन्न गति से चलती हैं। क्षीण चक्रवात की गति 32 किमी. प्रति घंटा होती है, जबकि हरिकेन 120 किमी. प्रति घंटे से भी अधिक गति से चलता हैं।
- सामान्यत: चक्रवात का व्यास 500 से 800 किमी. तक होता है। परंतु कभी-कभी इनका व्यास 50 किमी. से भी कम हो जाता है।
- ये सदैव गतिशील नहीं होते बल्कि कभी-कभी एक ही स्थान पर कई दिन तक स्थायी होकर तीव्र वर्षा करते हैं।
- इनका आगमन सामान्यत: ग्रीष्मकाल के अंत में होता है। शीतोष्ण चक्रवात की अपेक्षा इनकी संख्या तथा प्रभावित क्षेत्र सीमित होता है।
- सामान्यतया इस चक्रवात की ऊपरी सीमा 10 से 15 किलोमीटर तक होती है।

विश्व मौसम संगठन (World Meteorological Organization–WMO) ने चक्रवातीय प्रवाह को वायु वेग के आधार पर वर्गीकृत करते हुए 17 मीटर प्रति सेकंड वेग के चक्रवात को अयनवर्ती चक्रवात, 17 मीटर से 32 मीटर प्रति सेकंड वेग के चक्रवात को उष्णकटिबंधीय तूफान एवं 32 मीटर प्रति सेकेंड से अधिक वेग के चक्रवातीय प्रवाह को उष्णकटिबंधीय चक्रवात के रूप में वर्गीकृत किया है। उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में सबसे महत्त्वपूर्ण आवर्त विक्षोभ में अमेरिका में हरिकेन, चीन तथा जापान में टाइफून, उत्तरी ऑस्ट्रेलिया में बिलीबिली तथा भारत तथा बांग्लादेश में उष्णकटिबंधीय तूफान कहलाते हैं।

उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की उत्पत्ति के लिए आवश्यक दशाएँ (Necessary Conditions for the Origin of Tropical Cyclones)

- उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के उत्पत्ति के लिए एक विशाल गर्म सागर का होना अति आवश्यक है, जिसके तल का तापमान 27^o या 80^o फारेनहाइट से अधिक हो। ऐसी अवस्था केवल विषुवत्

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 E.	बादल फटना (Cloud Burst)

- मेघ प्रस्फुटन
  - ➤ मेघ प्रस्फुटन के प्रभाव
  - ➤ भारत सरकार की पिछली पहलें
  - ➤ राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन दिशा-निर्देश

बादल फटना/ मेघ प्रस्फुटन (Cloud Burst)

- आई.एम.डी. के अनुसार, एक घंटे में 100 मिमी. बारिश को बादल फटना कहा जाता है।
- विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों के कारण, देश के कुछ हिस्सों में अचानक तीव्र भारी वर्षा होती है जिसे बादल फटना कहा जाता है। वर्षा लाने वाली प्रमुख मौसम संबंधी प्रणालियाँ जो अल्पकालिक भारी वर्षा का कारण बनती हैं और जो बाढ़ का कारण भी बन सकती हैं, वे हैं:
  - ➤ मानसून अवसाद,
  - ➤ भारत के मैदानी इलाकों में मानसून गर्त की तीव्रता एवं स्थान में परिवर्तन,
  - ➤ भारत के तटों विशेषकर गुजरात पर मध्य क्षोभमंडल परिसंचरण/ निम्न दबाव,
  - ➤ अपतटीय भंवर।
- बादल फटने की घटना क्षेत्र और अवधि के संदर्भ में बहुत छोटे पैमाने पर घटित होती है। अत: इसका पूर्वानुमान लगाना अत्यंत कठिन होता है।
- यह सामान्यत: जून के आरंभ में दक्षिण-पश्चिम मानसून के मौसम के दौरान भारत में घटित होने वाली एक सामान्य घटना है। इसके लिए "राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (NDMA)", "राहत अभियान की निगरानी के लिए उत्तरदायी एक नोडल एजेंसी है।"
- बादल का फटना तब होता है, जब आर्द्र पवनें पहाड़ी ढलानों (पवनमुखी ढाल) से टकराकर ऊर्ध्वगामी रूप से गति करने लगती हैं। इससे बादलों का लंबवत स्तंभ निर्मित होने लगता है, जिसे "कपासी वर्षा बादल /मेघ" (Cumulonimbus Clouds) कहते हैं। इन बादलों के कारण भारी वर्षा, तूफान और बिजली गिरने जैसी घटनाएं घटित होती हैं। बादल फटने की घटनाएं मैदानी इलाकों में भी घटित होती हैं, लेकिन पर्वतीय क्षेत्रों में इनके घटित होने की संभावना अधिक होती है। कभी-कभी उत्तर-पश्चिम दिशा से आने वाली पवनें भी बादल फटने की घटना में सहायक भूमिका निभाती हैं।

मेघ प्रस्फुटन के कारक

- जलवायु परिवर्तन
- वैश्विक तापन
- बाढ़ के मैदानों और नदी तटों का कंक्रीटीकरण
- निर्वनीकरण
- पहाड़ी मैदानों और भूकंपीय क्षेत्रों में निर्माण कार्य

> - उत्तराखण्ड में बादल फटने की बारम्बारता में वृद्धि का मानवीय कारण
> - उत्तराखण्ड पर्यटन के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण राज्य है। इस क्षेत्र में पर्यटन को बढावा देने के लिए परिवहन विकास, आवास निर्माण एवं अन्य आधारभूत संरचनाओं का विकास किया गया। जिसके कारण बड़े स्तर पर निर्वनीकरण किया गया परिणाम स्वरूप ताप वृद्धि हुई और बादल फटने की बारम्बारता में भी वृद्धि हुई।
> - उत्तराखण्ड के टिहरी बाँध के कारण जहाँ एक तरफ बड़े स्तर पर निर्वनीकरण हुआ है वहीं दूसरी तरफ बड़े जलाशय के निर्माण के कारण इन क्षेत्रों में वाष्पीकरण की दर में भी वृद्धि हुई है; जिसके कारण बादल फटने की बारम्बारता में वृद्धि हुई है और लोगों का बड़े स्तर पर नुकसान हुआ है।

बादल फटने का प्रभाव

भूस्खलन-

- पर्वतीय ढलान व्यापक मात्रा में जल के प्रवाह को तीव्र अधोगामी गति प्रदान करते हैं। जिससे भूस्खलन, पंकप्रवाह और बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
- चादरी अपरदन और भूस्खलन के कारण मृदा का क्षरण होता है, जिसके परिणामस्वरूप संबंधित कृषि भूमि की उत्पादकता में गिरावट आती है।

आकस्मिक बाढ़

- यह सामान्यत: बादल फटने की घटना वाले क्षेत्र के अनुप्रवाह दिशा में स्थिर क्षेत्रों में घटित होती है। क्योंकि अनुप्रवाह दिशा में स्थित क्षेत्र इस घटना द्वारा उत्पन्न तीव्र वेग वाली अतिशय जल की मात्रा को वहन नहीं कर पाते हैं।

जान-माल की हानि

- यह पहाड़ी इलाकों में होने वाली भारी वर्षा का मुख्य परिणाम है। जिससे मानव जीवन को क्षति और अवसंरचना के विनाश का सामना करना पड़ता है।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 F.	हीट वेव (Heat Wave)

- हीट वेव
  - ➤ हीट वेव की रोकथाम और प्रबंधन कार्य योजना की तैयारी के लिए राष्ट्रीय दिशा-निर्देश
- समुद्री हीट वेव
  - ➤ समुद्री हीट वेव का समुद्री जीवन पर प्रभाव
  - ➤ समुद्री हीट वेव का मानव जीवन पर प्रभाव
  - ➤ ग्लोबल वार्मिंग का समुद्री हीट वेव और महासागरों पर प्रभाव

हीट वेव (Heat Wave)

- हीट वेव असामान्य रूप से उच्च तापमान की अवधि है, जो सामान्य अधिकतम तापमान से अधिक होता है, जो भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों में गर्मी के मौसम के दौरान होता है।
- गर्मी की लहरें आमतौर पर मार्च और जून के बीच होती हैं और कुछ दुर्लभ मामलों में जुलाई तक भी बढ़ जाती हैं। अत्यधिक तापमान और परिणामी वायुमंडलीय परिस्थितियाँ इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं क्योंकि वे शारीरिक तनाव का कारण बनती हैं, जिसके परिणामस्वरूप कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है।

भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (IMD) ने हीट वेव के लिए निम्नलिखित मानदंड दिए हैं:

- जब तक किसी स्टेशन का अधिकतम तापमान मैदानी क्षेत्रों के लिए कम-से-कम 40°C और पहाड़ी क्षेत्रों के लिए कम-से-कम 30°C तक नहीं पहुँच जाता तब तक हीट वेव पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। जब किसी स्टेशन का सामान्य अधिकतम तापमान 40°C से कम या उसके बराबर हो तो हीट वेव का सामान्य से विचलन 5°C से 6°C होता है, जबकि गंभीर हीट वेव का विचलन सामान्य से 7°C या अधिक होता है तथा जब किसी स्टेशन का सामान्य अधिकतम तापमान 40°C से अधिक होता है तो हीट वेव का सामान्य से विचलन 4°C से 5°C होता है, जबकि गंभीर हीट वेव का सामान्य से विचलन 6°C या अधिक होता है और जब वास्तविक अधिकतम तापमान 45°C या इससे अधिक रहता है तो सामान्य अधिकतम तापमान को ध्यान में रखे बिना हीट वेव घोषित की जानी चाहिए।
- जलवायु परिवर्तन के कारण वैश्विक स्तर पर उच्च दैनिक चरम तापमान और लंबी एवं गंभीर हीट वेव तेज़ी से बढ़ रही हैं।
- भारत भी गर्मी की लहरों की बढ़ती घटनाओं के रूप में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को महसूस कर रहा है जो हर गुज़रते साल के साथ प्रकृति में अधिक तीव्र हो जाती है और मानव स्वास्थ्य पर विनाशकारी प्रभाव डालती है जिससे हीट वेव से होने वाली मौतों की संख्या में वृद्धि होती है।

हीट वेव की रोकथाम और प्रबंधन कार्य योजना की तैयारी के लिए राष्ट्रीय दिशा-निर्देश (National Guidelines for Preparation of Heat Wave Prevention and Management Action Plan)

दिशा-निर्देशों की संरचना

- पिछली सीख और अनुभवों को साझा करने, राज्यों द्वारा की गई शैक्षणिक और संस्थागत अनुसंधान कार्रवाई तथा ऐतिहासिक डाटा ने इन दिशा-निर्देशों को तैयार करने में मदद की। इसमें डाटा और दस्तावेज़ीकरण रिकॉर्ड करने के लिए पाँच अध्याय और प्रारूप हैं:

अध्याय 1 - पृष्ठभूमि और परिचय

- यह अध्याय उच्च आर्द्रता और संबंधित वायुमंडलीय स्थितियों के साथ अत्यधिक तापमान के कारणों की जाँच करता है जो कई देशों और लाखों लोगों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता हैं जिससे शारीरिक तनाव, उत्पादकता में कमी, बीमारी और कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है।

अध्याय 2 - कार्य योजना की तैयारी

- यह अध्याय दिशा-निर्देशों, भेद्यता मूल्यांकन, निर्मित वातावरण, अल्पकालिक, मध्यम अवधि और दीर्घकालिक लक्ष्यों के पीछे के तर्क को बताता है और प्रमुख उद्देश्यों को सूचीबद्ध करता है। इसमें कार्य योजना विकसित करने में शामिल कदमों के अलावा स्थानीय स्तर पर इस चरम मौसम की घटना के लिए तैयारी करने और प्रतिक्रिया देने के लिए आवश्यक प्रमुख रणनीतियों को भी सूचीबद्ध किया गया है।

अध्याय 3 - प्रारंभिक चेतावनी और संचार

- यह अध्याय मौसम पूर्वानुमान और पूर्व चेतावनी जारी करने की पूरी प्रणाली की व्याख्या करता है। लघु से मध्यम अवधि का पूर्वानुमान घटना के घटित होने की संभावना के साथ जोखिम वाले संभावित क्षेत्रों को इंगित करता है। नाउकास्टिंग हीट वेव की घटना के स्थान और समय के बारे में विशिष्ट जानकारी प्रदान करता है। यह अध्याय विभिन्न स्तरों पर प्रारंभिक चेतावनी संचार और प्रसार रणनीतियों और सार्वजनिक जागरूकता, सामुदायिक आउटरीच और योजनाओं को भी तैयार करता है, ताकि समय पर जानकारी अधिकारियों के साथ-साथ आम जनता तक भी पहुँच सके।

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 6 G.	वनाग्नि (Forest Fire)

- वनाग्नि
  - ➤ वनाग्नि के प्रकार
  - ➤ वनाग्नि के कारण
  - ➤ वनाग्नि त्रिकोण
  - ➤ वनाग्नि से होने वाली क्षति एवं लाभ
- भारत में वनाग्नि के आँकड़े (वर्ष 2001-2016)
  - ➤ भारत में वनाग्नि रोकथाम एवं प्रबंधन
  - ➤ वनाग्नि प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय योजना
  - ➤ अग्नि आपातकालीन प्रतिक्रिया पर काम करने वाले संगठन
  - ➤ वनाग्नि से बचाव के उपाय
  - ➤ भारत में वनाग्नि प्रबंधन में प्रमुख मुद्दे और कमियाँ
  - ➤ केस स्टडी
- वनाग्नि के कानूनी प्रावधान
  - ➤ भारत वन अधिनियम, 1927
  - ➤ वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, 1972

वनाग्नि (Forest Fire)

- वनाग्नि प्रकृति में होने वाली एक अनियंत्रित आग है। हालाँकि, वनाग्नि कई देशों में एक चुनौती है तो वहीं भारत के वन परिदृश्य की एक सर्वव्यापी विशेषता भी है। विश्व स्तर पर वनाग्नि को वनों के अवनति के प्रमुख कारक के रूप में पहचाना गया है। वनाग्नि को भौतिक, जैविक, पारिस्थितिक और पर्यावरणीय परिणामों के साथ एक संभावित खतरा माना जाता है।
- भारत में वनाग्नि वनों की अवनति की प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण और लगातार बढ़ने वाला कारक है, हालाँकि कुल क्षति की सीमा व्यापक रूप से विवादित है। यह अनुमान लगाया गया है कि प्रतिवर्ष आग लगने की संभावना वाले वन क्षेत्रों का अनुपात कुछ राज्यों में 33% से लेकर अन्य में 90% से अधिक है।
- भारतीय वन सर्वेक्षण (एफ.एस.आई.) का अनुमान है कि देश का लगभग 50% वन क्षेत्र आग की चपेट में है। यह अनुमान लगाया गया है कि लगभग 3.73 मिलियन हेक्टेयर वन क्षेत्र प्रतिवर्ष वनाग्नि से प्रभावित होता है, जहाँ क्रमशः 0.87%, 0.14% और 5.16% वन क्षेत्रों में बहुत और बार-बार जंगल की आग से क्षति देखी जाती है।
- आग प्रकृति की सबसे पुरानी घटनाओं में से एक है जो संभवतः स्थलीय वनस्पति और वायुमंडल के विकास के साथ-साथ विकसित हो रही है।
- आग कई वन पारिस्थितिकी प्रणालियों के कामकाज का एक महत्त्वपूर्ण और प्राकृतिक हिस्सा है। मानव ने हज़ारों वर्षों से भूमि प्रबंधन उपकरण के रूप में आग का उपयोग किया है। हालाँकि, बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में, मानव आग की गतिशीलता में बदलाव और अल-नीनो आवृत्ति में वृद्धि ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी है जहाँ आग अब कई जंगलों और उनमें जैव-विविधता के लिए एक बड़ा खतरा बन गया है।
- उष्णकटिबंधीय वर्षा वन तथा मेघ वन, जो आमतौर पर बड़े पैमाने पर नहीं जलते, 1980 और 1990 के दशक के दौरान वनाग्नि से तबाह हो गए थे।

वनाग्नि के प्रकार (Types of Forest Fire)

- वनाग्नि को सामान्यतः तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है-
  - ➤ प्राकृतिक या नियंत्रित वनाग्नि
  - ➤ गर्मियों में मानवीय उपेक्षा के कारण कूड़े और अन्य बायोम में उत्पन्न गर्मी के कारण वनाग्नि
  - ➤ स्थानीय निवासियों द्वारा जानबूझकर लगाई गई वनाग्नि
- वनाग्नि तीन प्रकार की होती है-
  - (i) धरातलीय अग्नि
  - (ii) भूमिगत अग्नि
  - (iii) शिखर अग्नि

(i) **धरातलीय अग्नि :** जो एक ज्वलंत लपटों के साथ फैलती है और ज़मीन के स्तर पर स्थित पत्तियों के कूड़े, गिरी हुई शाखाओं तथा अन्य ईंधन को जला देती है।

(ii) **भूमिगत अग्नि :** जो सतह के कूड़े के नीचे मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों को जलाती है और चमकदार दहन द्वारा कायम रहती है।

(iii) **शिखर अग्नि :** जो वृक्षों के शिखर तक को जलाती है तथा यह सबसे तीव्र एवं जोखिम पूर्ण अनियंत्रित वनाग्नि है जिसे जलते रहने के लिए तेज़ हवाओं, खड़ी ढलानों और भारी ईंधन की आवश्यकता होती है।

- वनाग्नि दो प्रकार की होती है, भूमिगत अग्नि और शिखर अग्नि। भूमिगत अग्नि में लपटें सतह के पास ही रहती हैं जो झाड़ियों और छोटे पेड़ों को जला देती है। इससे मिट्टी अच्छी स्थिति में रहती है। जबकि, शिखर अग्नि बड़े पेड़ों की चोटियों सहित पूरे जंगल को जला देती है। वे इतने तीव्र जलते हैं कि वे ज़मीन के ऊपर और शायद एक फुट नीचे मिट्टी में हर चीज़ को नष्ट कर देते हैं।

वनाग्नि के कारण (Causes of Forest Fire)

वनाग्नि प्राकृतिक कारणों के साथ-साथ मानवजनित कारणों से भी लगती है।

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-7

इकाई 7 — भारत में आपदा प्रबंधन (Disaster Management in India)

- भूमिका
- राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005
- राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन नीति, 2009
- राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना, 2016
- आपदा प्रबंधन चक्र
- भारत में आपदा प्रबंधन चक्र
- सेंडाई फ्रेमवर्क, 2015-30
- आपदा प्रबंधन में मीडिया की भूमिका

भूमिका (Introduction)

भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में आपदा प्रबंधन के लिए राष्ट्रीय कमेटी (National Committee on Disaster Management: NCDM) की स्थापना की गई है। इस राष्ट्रीय कमेटी के प्रस्ताव राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन कार्यक्रम का आधार होंगे तथा प्राकृतिक आपदा प्रबंधन और प्रतिक्रिया तंत्र को बल मिलेगा। यूनाइटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम (यू.एन.डी.पी.) भी सरकार की आपदा प्रबंधन क्षमता को मज़बूत करने में सहायक होता है।

कार्यक्रम में निम्नलिखित घटक सम्मिलित होंगे-

- प्रांत और ज़िले की आपदा प्रबंधन योजना का विकास।
- आपदा (रिस्क) जोखिम प्रबंधन और प्रतिक्रिया योजना का विकास गाँव/वार्ड, ग्राम पंचायत, ब्लॉक/शहरी स्थानीय स्तर पर।
- सभी स्तरों पर आपदा प्रबंधन टीम बनाई जाएँ और इनमें सभी कमेटी और टीमों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व भी उचित अनुपात में होना आवश्यक है।
- सभी स्तरों पर आपदा प्रबंधन टीम की क्षमता बढ़ाई जाए। प्राथमिक उपचार, शरण स्थलों का प्रबंधन, पानी और सफाई, बचाव और निकास/रिक्तीकरण में महिलाओं को विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- आपदा प्रवण स्थानों की इमारतों में चक्रवात और भूकंप प्रतिरोधकता क्षमता वाले उपकरण लगाए जाने चाहिए।

राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 (National Disaster Management Act, 2005)

- राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 केंद्र, राज्य, ज़िला एवं स्थानीय स्तरों पर संस्थागत, कानूनी, वित्तीय एवं समन्वय तंत्र स्थापित करता है। यह राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन (NDM), राज्य स्तर पर आपदा प्रबंधन (SDM) एवं ज़िला स्तर पर ज़िला आपदा प्रबंधन (DDM) की स्थापना का प्रावधान करता है।
- आपदा प्रबंधन हेतु प्राथमिक उत्तरदायित्व संबंधित राज्य सरकार का होता है। केंद्र, राज्य एवं ज़िला स्तर पर स्थापित संस्थागत तंत्र, राज्यों को प्रभावी रूप से आपदाओं का प्रबंधन करने में सक्षम बनाते हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर संस्थागत ढाँचा (Institutional Framework at National Level)

- **आपदा प्रबंधन प्रभाग (Disaster Management Division), गृह मंत्रालय :** आपदा प्रबंधन का समग्र समन्वय गृह मंत्रालय का दायित्व है। प्राकृतिक आपदाओं एवं मानवजनित आपदाओं हेतु प्रतिक्रिया, राहत व तैयारी का उत्तरदायित्व आपदा प्रबंधन प्रभाग का है। प्रभावी आपदा जोखिम न्यूनीकरण हेतु गृह मंत्रालय का आपदा प्रबंधन प्रभाग, केंद्र सरकार की ओर से आपदा प्रभावित राज्य सरकारों, संबद्ध मंत्रालयों/विभागों, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (National Disaster Management Authority: NDMA), राष्ट्रीय आपदा मोचन बल (National Disaster Response Force: NDRF), राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान (National Institute of Disaster Management: NIDM) एवं अग्निशमन सेवा निदेशालय, होम गार्ड्स व नागरिक सुरक्षा तथा सशस्त्र बलों के साथ समन्वय करता है।
- **राष्ट्रीय कार्यकारी समिति (National Executive Committee-NEC) :** यह आपदा प्रबंधन के लिए समन्वयकारी व निगरानी निकाय के रूप में कार्य करती है। इसकी अध्यक्षता केंद्रीय गृह सचिव द्वारा की जाती है तथा कृषि, परमाणु ऊर्जा, रक्षा, पेयजल आपूर्ति, पर्यावरण व वन, वित्त (व्यय), स्वास्थ्य, विद्युत, ग्रामीण विकास, विज्ञान व प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष, दूरसंचार, शहरी विकास और जल संसाधनों पर नियंत्रण वाले मंत्रालयों एवं विभागों के सचिव स्तर के अधिकारी इसके सदस्य होते हैं। चीफ ऑफ स्टाफ कमेटी का एकीकृत रक्षा स्टाफ प्रमुख (Chief of Integrated Defence Staff) इसका पदेन सदस्य होता है। किसी भी भीषण आपदा की स्थिति या आपदा की ऐसी स्थिति में जहाँ केंद्रीय सहायता की आवश्यकता हो, आपदा प्रबंधन प्रतिक्रिया का समन्वय

Copyright @ Sanskriti IAS

इकाई 8 — जल संकट एवं ऊर्जा
(Water Crisis and Energy)

- भूमिका
- जल की खपत
- जल संकट के कारण
- संरक्षण एवं प्रबंधन की रणनीति
- राष्ट्रीय जल मिशन
  - राष्ट्रीय जल मिशन के लक्ष्य
  - जल शक्ति अभियान : कैच द रेन
  - जल जीवन मिशन
- ❖ ऊर्जा
- ऊर्जा से संबंधित संगठन
  - अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी
  - अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी और भारत
  - अंतर्राष्ट्रीय अक्षय ऊर्जा एजेंसी
  - अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन
  - विश्व ऊर्जा परिषद्
- कार्यक्रम एवं योजनाएँ
  - वन सन, वन वर्ल्ड, वन ग्रिड
  - योजना से संबंधित मुद्दे
  - जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशन
  - पी.एम.-कुसुम
- गोबर धन
  - उद्देश्य
  - क्षमता और लाभ
- रूफटॉप सोलर योजना
  - योजना के प्रमुख उद्देश्य

भूमिका (Introduction)

जल चक्र की प्रक्रिया के द्वारा जल का जलमंडल, वायुमंडल और स्थलमंडल के मध्य जलवाष्प और हिम कणों के रूप में चक्रीय प्रवाह तो होता है, लेकिन कुल मात्रा परिवर्तित नहीं होती है। वास्तव मे, हम जल का उत्पादन नहीं कर सकते हैं। यहाँ तक कि किसी भी अन्य संसाधन के साथ प्रतिस्थापित भी नहीं कर सकते हैं।

प्राकृतिक संसाधनों में जल एक आधारभूत संसाधन है। यह मानव की उत्तरजीविता के लिए अपरिहार्य है। मानव शरीर में जल की मात्रा 60-70% तक होती है। हम भोजन के बिना कई दिनों तक रह सकते हैं, किंतु जल के बिना कुछ घंटों तक रह पाना भी कठिन हो जाता है। अब खाद्य सुरक्षा के साथ जल सुरक्षा को भी सुनिश्चित करते हुए मानव की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विशेष योजनाओं के निर्धारण पर बल देने की आवश्यकता है। जल केवल समाज की मौलिक आवश्यकताओं में से एक नहीं है, बल्कि कृषि के क्षेत्र में जल संसाधन का प्रबंधन किए बिना कृषि योग्य भूमि की उत्पादकता में वृद्धि नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि कृषि के क्षेत्र में आधारभूत संरचना के स्तर पर सिंचाई के साधनों का विकास कर जल संसाधन के प्रबंधन को प्राथमिकता दी जाती है। सिंचाई के द्वारा फसलों, फलों एवं सब्जियों की उत्पादकता में वृद्धि करके खाद्य सुरक्षा के उद्देश्य को सुनिश्चित करने के साथ कृषि पर आधारित उद्योगों का विकास किया जा सकता है।

प्राकृतिक पर्यावरण के घटकों में जल एक आधारभूत घटक है। प्राकृतिक वनस्पति, मृदा से जल के साथ पोषक तत्त्व प्राप्त करते हैं जिससे वनस्पति के साथ पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। मानव समुदाय के समान जीव-जंतुओं की उत्तरजीविता के लिए भोजन के साथ जल का उपलब्ध होना आवश्यक है। वास्तव में, प्राकृतिक पर्यावरण के साथ पारिस्थितिकी तंत्र और जैव-विविधता के संरक्षण के लिए जल संसाधन का संरक्षण करना आवश्यक है।

सामान्यत: उद्योगों का स्थानीयकरण जल स्रोतों के समीप किया जाता है क्योंकि कच्चे माल के परिष्करण से लेकर उत्पादन के स्तर तक जल की आवश्यकता होती है। थर्मल पावर प्लांट से विद्युत ऊर्जा के उत्पादन के लिए जल को भाप में परिवर्तित करना पड़ता है। यही कारण है कि जल की मांग मूलत: तीन क्षेत्रों से आती है–

(i) घरेलू जल की मांग शौच के बाद फ्लश करने, नहाने, खाना पकाने, कपड़ा धोने और घर की सफाई से संबंधित कार्यों के लिए होती है।
(ii) कृषि के क्षेत्र में सिंचाई के द्वारा फसलों को आवश्यकतानुसार जल उपलब्ध कराया जाता है।
(iii) उद्योगों में उत्पादन से संबंधित कार्यों में प्रत्येक स्तर पर जल की आवश्यकता होती है।

जल की खपत (Consumption of Water)

जहाँ हम घरों में जल की खपत को देखते व अनुभव करते हैं, वहीं कृषि और औद्योगिक इकाइयों में उपयोग किए जाने वाले जल का आकलन नहीं कर पाते हैं। खाद्य और गैर-खाद्य वस्तुओं के उत्पादन में खपत किए जाने वाले आभासी जल का वास्तविक आकलन नहीं हो पाता है। वाटर फुटप्रिंट एक संकेतक है जो एक उपभोक्ता या उत्पादक के प्रत्यक्ष तथा आभासी जल को मापता है। एक उत्पादक का वाटर फुटप्रिंट उस वस्तु को उत्पादित करने में प्रयुक्त होने वाले स्वच्छ जल की मात्रा होता है।

हम देश के कुल वाटर फुटप्रिंट को जनसंख्या से विभाजित करके प्रति व्यक्ति वाटर फुटप्रिंट का निर्धारण करते हैं।

Copyright @ Sanskriti IAS

खंड-9

इकाई 9 अंतर्राष्ट्रीय संगठन एवं सम्मेलन (International Organizations and Conferences)

- इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर
- विश्व वन्यजीव कोष-1961
- संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन - यूनेस्को
- मानव एवं जैवमंडल कार्यक्रम-1971
- रामसर कन्वेंशन-1971
- राष्ट्रीय आर्द्रभूमि संरक्षण कार्यक्रम
- संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम
- वन्यजीवों एवं वनस्पतियों की लुप्तप्राय प्रजातियों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर कन्वेंशन
- ट्रैफिक
- जंगली जानवरों की प्रवासी प्रजातियों के संरक्षण पर कन्वेंशन
- नैरोबी घोषणा-1982
- ओज़ोन परत के संरक्षण के लिए वियना कन्वेंशन -1985
- मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल -1987
- किगाली संशोधन
- ब्रंटलैंड रिपोर्ट : 1987
- जलवायु परिवर्तन पर अंतर-सरकारी पैनल-1988
- विश्व मौसम विज्ञान संगठन
- मरुस्थलीकरण का मुकाबला करने के लिए संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन
- मिनीमाता कन्वेंशन

❖ अधिनियम एवं नीतियाँ

- भारत में वन एवं वन्यजीव संरक्षण से संबंधित अधिनियम एवं नीतियाँ
- वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, 1972
- जल (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1974
- वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- राष्ट्रीय वन नीति, 1952
- राष्ट्रीय वन नीति, 1988
- जैव-विविधता अधिनियम, 2002
- राष्ट्रीय जैव-विविधता प्राधिकरण
- अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006
- ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016
- ई-अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016
- ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) संशोधन नियम, 2018
- आर्द्रभूमि (संरक्षण और प्रबंधन नियम), 2017
- राष्ट्रीय आर्द्रभूमि समिति

❖ जलवायु परिवर्तन से संबंधित संगठन एवं सम्मेलन

- पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, रियो डी जेनेरियो, ब्राज़ील, 3-14 जून, 1992
- पर्यावरण और विकास पर रियो घोषणा
- एजेंडा-21
- वन प्रबंधन सिद्धांत
- जैव-विविधता पर सम्मेलन
- जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन
- भूमंडलीय जलवायु परिवर्तन पर बाली सम्मेलन, 2007
- कोपेनहेगन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, दिसंबर 2009
- कानकुन शिखर सम्मेलन- 2010 जलवायु परिवर्तन
- डरबन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन- नवंबर 2011
- दोहा सम्मेलन, 2012
- क्योटो प्रोटोकॉल संशोधन, 2012
- वारसा सम्मेलन-2013
- वैश्विक पर्यावरणीय सुविधा
- नगोया प्रोटोकॉल क्रियान्वयन निधि
- अनुकूलन ट्रस्ट निधि
- लीमा (पेरू) सम्मेलन-2014
- पेरिस सम्मेलन-2015
- अंतर्राष्ट्रीय सौर ऊर्जा गठबंधन
- क्लाइमेट न्यूट्रल नाउ
- माराकेश कॉप-22
- अन्य महत्त्वपूर्ण शब्दावली
- भारत में उत्सर्जन को कम करने की पहल

इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर (IUCN), 1948

- वर्ष 1948 में अपनी स्थापना के बाद से, आई.यू.सी.एन. प्राकृतिक विश्व की स्थिति और इसकी सुरक्षा के लिए आवश्यक उपायों पर वैश्विक प्राधिकरण बन गया है। आई.यू.सी.एन. द्वारा प्रदान किए गए ज्ञान और उपकरण यह सुनिश्चित करने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं कि मानव प्रगति, आर्थिक विकास और प्रकृति संरक्षण एकसाथ हो।
- आई.यू.सी.एन. की स्थापना 5 अक्तूबर, 1948 को फ्राँस के फॉनटेनब्लियू शहर में हुई थी। इसका मुख्यालय स्विट्ज़रलैंड के ग्लैंड में स्थित है। पहले वैश्विक पर्यावरण संघ के रूप में, इसने प्रकृति की रक्षा के लिए साझा लक्ष्य के साथ सरकारों और नागरिक समाज संगठनों को एकजुट किया।

Copyright @ Sanskriti IAS

संस्कृति IAS

जहाँ एक नहीं, हर शिक्षक है श्रेष्ठ

देश में हिंदी माध्यम से सामान्य अध्ययन की सर्वश्रेष्ठ टीम

सामान्य अध्ययन

फाउंडेशन कोर्स (प्रिलिम्स + मेन्स)

प्रत्येक माह नया बैच आरंभ

हाइब्रिड कोर्स ऑफलाइन + ऑनलाइन

SPECIAL OFFER

9555 124 124

दिल्ली एवं प्रयागराज

वैकल्पिक विषय

कार्यक्रम विशेषताएँ

इतिहास वैकल्पिक विषय

द्वारा- श्री अखिल मूर्ति

- इतिहास और भूगोल में मानचित्र द्वारा अध्ययन के लिए वैज्ञानिक प्रविधि का प्रयोग
- क्लास के तुरंत बाद प्रत्येक विद्यार्थी की विषय संबंधी शंकाओं का निवारण
- प्रत्येक विद्यार्थी की पर्सनल मेंटरिंग व टेस्ट का मूल्यांकन फैकल्टी द्वारा
- मुख्य परीक्षा में पूछे गए विगत 25 वर्षों के प्रश्नों का उत्तर लेखन अभ्यास

भूगोल वैकल्पिक विषय

द्वारा- श्री कुमार गौरव

GS EXTENSIVE COURSE Prelims + Mains
- लगभग 650 कक्षाओं का एक्स्टेंसिव स्टडी प्रोग्राम
- AI द्वारा समर्थित अध्यापन प्रविधि का प्रयोग
- प्रत्येक टॉपिक का बेसिक से एडवांस लेवल तक कवरेज

INDIVIDUAL MENTORING
- शॉर्ट नोट्स और सिनॉप्सिस बनाने का प्रशिक्षण
- उत्तर लेखन में सुधार के लिए पर्सनल गाइडेंस
- स्टडी इम्प्रूवमेंट के लिए वन-टू-वन सेशन

PGP — PRELIMS GUIDANCE Programme
- प्रत्येक टॉपिक के लिए महत्त्वपूर्ण करेंट अफेयर्स सिनॉप्सिस
- विगत 13 वर्षों के PYQs में पैटर्न के अनुरूप संपूर्ण पाठ्यक्रम का रिवीज़न

PCS COURSES
- UPPCS फाउंडेशन कोर्स
- BPSC फाउंडेशन कोर्स
- MPPCS फाउंडेशन कोर्स
- RAS फाउंडेशन कोर्स
- UP-RO/ARO

MMP — MAINS MENTORSHIP Programme
- संस्कृति IAS की कोर फैकल्टी द्वारा Daily पर्सनल मेंटरिंग की सुविधा
- चारों प्रश्नपत्रों पर आधारित 70 टेस्ट का Intensive Test Programme

IGP — INTERVIEW GUIDANCE Programme
- एक्सपर्ट के साथ वन-टू-वन सेशन
- DAF एनालिसिस एक्सपर्ट के साथ सीधा संवाद
- इंटरव्यू पैनल द्वारा मॉक इंटरव्यू सेशन्स

CSAT COURSE
- गणित और रीज़निंग का बेसिक से एडवांस लेवल तक Step-by-Step अध्यापन
- कॉम्प्रिहेंशन के प्रश्नों को सटीक और त्वरित ढंग से हल करने के लिए डायनमिक मेथडलॉजी

NCERT COURSE
- प्रत्येक विषय की कक्षा 6 से 12 तक की NCERT पर कक्षानुसार लैक्चर
- NCERT पर आधारित प्रिलिम्स और मेन्स के प्रश्नों पर चर्चा

QAD PROGRAMME
- GS के सभी टॉपिक्स के विगत वर्षों के PYQs पर विस्तृत प्रश्नोत्तर चर्चा
- प्रिलिम्स परीक्षा में जटिल प्रश्नों को सुगमता से हल करने में सक्षम बनाना

CURRENT AFFAIRS Programme
- राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के समसामयिक घटनाक्रमों का विस्तृत कवरेज
- फैकल्टी द्वारा समसामयिक घटनाक्रमों का विषयवार डिस्कशन

Mode of Courses

Hybrid Course — Offline Classroom & Online Live Stream

Offline Classroom

Online Live Stream — 3 साल तक Mobile App पर वीडियो लैक्चर देखने की सुविधा

हेड ऑफिस: 636, भू-तल, डॉ. मुख़र्जी नगर, दिल्ली-110009

प्रयागराज केंद्र: महाराणा प्रताप चौराहा, स्टैनली रोड, सिविल लाइन्स, प्रयागराज, उ.प्र.

sanskritiias.com

Follows us: YouTube